संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित
ऋषि प्रसाद
मूल्य : रु. ६/-
अंक : १६९
जनवरी ०७
उत्तरायण पर्व :
१४ जनवरी
हिन्दी
'पुष्ट करनेवाले भगवान सूर्य हमारे इस
अर्घ्य से और पुष्ट हों तथा
हमें भी पुष्ट करने में विशेष समर्थ हों' -
इस सद्भावनावाली प्रार्थना से
'परस्परं भावयन्तु' तुम देव को पोसो और
देव तुम्हें पोसें।

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा संचालित विद्यार्थी उत्थान हेतु सत्प्रवृत्तियाँ
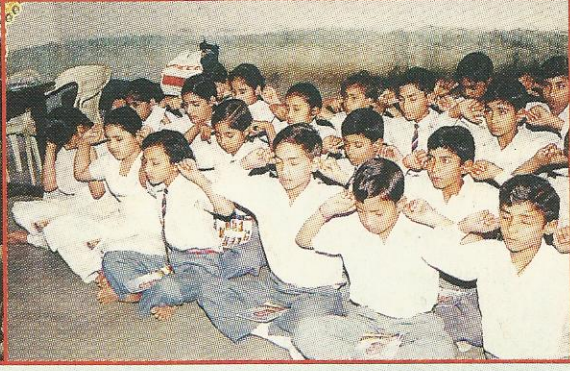
जालंधर (पंजाब) व जट्टारी जि. अलीगढ़ (उ.प्र.) में भ्रामरी प्राणायाम का प्रशिक्षण लेते विद्यार्थी ।

उल्हासनगर जि. थाने (महा.) में बुद्धिशक्तिवर्धक प्रयोग करते विद्यार्थी व
घोसाली जि. थाने (महा.) में विद्यार्थियों में निःशुल्क नोटबुक-वितरण ।
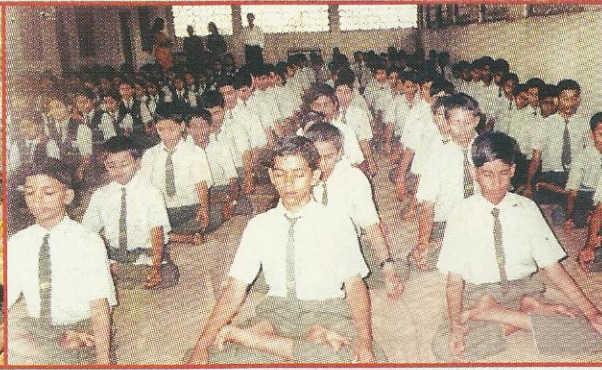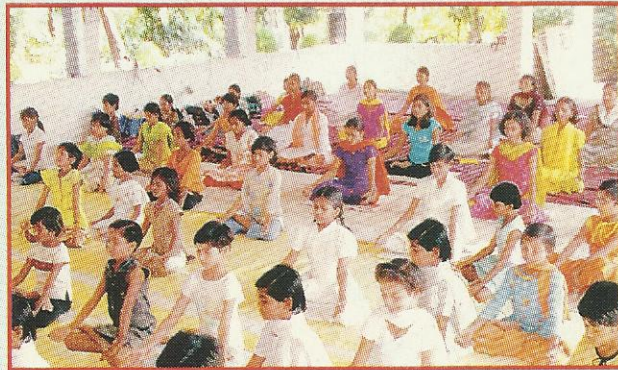
जलगाँव (महा.) व भायन्दर जि. थाने (महा.) में ध्यान द्वारा अपनी सुषुप्त शक्तियों को जागृत करते हुए विद्यार्थी ।

जामनेर जि. जलगाँव (महा.) में सामूहिक हवन करते हुए विद्यार्थी तथा शिर्डी जि. अहमदनगर (महा.) में बाल संकीर्तन यात्रा ।

वर्ष : १७ अंक : १६९ जनवरी २००७ पौष-माघ वि.सं. २०६३ मूल्य : रु. ६/-

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

8

भ्रामक प्रचार का भंडाफोड़ 30

इस अंक में

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : दिव्य भास्कर, भास्कर हाऊस, मकरबा, सरखेज-गाँधीनगर हाईवे, अहमदाबाद - ३८००५१
सम्पादक : श्री कौशिकभाई वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक	रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक	रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक	रु. २००/-
(४) आजीवन	रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक	रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक	रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक	रु. ३००/-
(४) आजीवन	रु. ७५०/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक	US$ 20
(२) द्विवार्षिक	US$ 40
(३) पंचवार्षिक	US$ 80
(४) आजीवन	US$ 200

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	१२०	५००
नेपाल, भूटान व पाक में	१७५	७५०
अन्य देशों में	US$ 20	US$ 80

कार्यालय : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें। पता-परिवर्तन हेतु एक माह पूर्व सूचित करें।

आश्चर्य है कि परमेश्वर का सुमिरन करना पड़ता है...

- पूज्य बापूजी

यक्ष ने महाराज युधिष्ठिर से पूछा : 'त्रिलोकी में सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है ?'

युधिष्ठिर महाराज ने कहा :

अहन्यहनि भूतानि गच्छन्तीह यमालयम् ।
शेषाः स्थावरमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम् ॥

'संसार से रोज-रोज प्राणी यमलोक में जा रहे हैं किंतु जो बचे हुए हैं वे सर्वदा जीते रहने की इच्छा करते हैं। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा ?'

(महाभारत, वनपर्वणि, आरणेय पर्व : ३१३.११६)

सब लोग मौत की तरफ जा रहे हैं और यमपुरी पहुँच रहे हैं लेकिन दूसरे जो उनको छोड़ने जाते हैं वे समझते हैं कि 'ये तो बेचारे मर गये' और खुद उनको श्मशान में छोड़कर यहाँ मानों सदा डेरा डालने के लिए फिर से लग जाते हैं- यह आश्चर्य युधिष्ठिर महाराज ने यक्ष को सुनाया। मैं तुमको एक नया आश्चर्य सुनाता हूँ कि जो हमारा अपना था, अपना है और अपना रहेगा उस परमेश्वर का सुमिरन करना पड़ता है परंतु जो संबंध पहले नहीं थे, बाद में नहीं हो जायेंगे तथा चीज-वस्तुएँ जो नष्ट हो गयी हैं अथवा जो अभी नहीं हैं और बाद में भी नहीं हो जायेंगी उनकी याद आ जाती है।

मनुष्य पैसे का सुमिरन कर लेता है, मरे हुए दादे-परदादे, मौसा-मौसी, पति-पत्नी... मुर्दों का - जो अभी हैं नहीं और जिनकी हड्डियाँ भी नहीं हैं, उनकी तो याद आती है लेकिन भगवान को याद करना पड़ता है- यही आश्चर्य है। शत्रु की याद आ जाती है, मित्रों की याद आ जाती है; अमेरिका, लंदन, यूरोप, पाकिस्तान की याद आ जाती है परंतु जिस भगवान को हम अपना मानते हैं उसे याद करना पड़ता है। यह कितनी बदकिस्मती है ! अरे भाई मेरे ! जिसको अपना मानते हो उसकी तो स्मृति स्वतः होनी चाहिए किंतु विडम्बना क्या है कि जो नित्य है, जिसकी शक्ति से आँखें देखती हैं, कान सुनते हैं, जीभ बोलती है, अन्न में से खून बनता है उस परमात्मा को याद करना पड़ता है। किसीने गाली दी हो, किसीने खुशामद की हो तो उसकी याद बार-बार आती है।

गाली और खुशामद अंतःकरण को आंदोलित करके विलय हो जाते हैं। गाली-खुशामद से तो अंतःकरण आंदोलित हुआ। तुम अपने उस नित्य, निरंजन स्वरूप की याद को; अन्तःकरण को सुख-दुःख से, भोग-विषाद से, दीनता-हीनता से मुक्त रखनेवाली अपनी परमेश्वरीय याद को; 'सब सपना-चैतन्य अपना'- इस मंगलकारी स्मृति को बढ़ाओ। अर्जुन की नाईं सदा के लिए निर्दुःख-निर्द्वन्द्व हो जाओ।

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा... **(गीता : १८.७३)**

तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ।

'हे अर्जुन ! उस नित्य-निरन्तर मुझमें युक्त हुए योगी के लिए मैं सुलभ हूँ अर्थात् उसे सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।' **(गीता : ८.१४)**

भजतां प्रीतिपूर्वकम्। ददामि बुद्धियोगं तं...

'मुझे प्रीतिपूर्वक भजनेवाले भक्तों को मैं वह बुद्धियोग (तत्त्वज्ञानरूप योग) देता हूँ।' **(गीता : १०.१०)**

भगवान तो सत् रूप से, चेतन रूप से, आनंद रूप से सभीके आत्मा बनकर बैठे हैं; फिर भी लोग दुःखी क्यों हैं ? क्योंकि भगवान स्वयं दुःख नहीं मिटाते हैं। भगवान की स्मृति ही दुःख मिटाती है। उनकी स्मृति से सुख पैदा होता है, शांति पैदा होती है, दिव्य ज्ञान पैदा होता है,

सद्बुद्धि पोषित होती है । उनका ज्ञान, उनका सत्संग और भगवत्प्रीत्यर्थ कर्म ही परम कल्याण करते हैं।

अच्युतः स्मृतिमात्रेण... अच्युत की स्मृतिमात्र ही प्रसन्नता की कुंजी है । अच्युत वह है जो अपने सच्चिदानंद स्वभाव से, अपनी स्थिति से कभी च्युत न हो, कभी गिरे नहीं । प्रलय-महाप्रलय में भी ज्यों-का-त्यों हो- ऐसे अपने अच्युत स्वभाव के ज्ञान, उसीके सुमिरन में सर्वोपरि पद है । शरीर तो अपने पद से गिर जाता है, कुर्सीवाला भी अपनी कुर्सी से निवृत्त हो जाता है। सेठ भी अपनी दुकान से और किसान अपने खेत से निवृत्त हो जाता है। आँख की शक्ति, कान की शक्ति, बुद्धि की योग्यता- ये सब च्युत हो जाते हैं। सृष्टि का भी प्रलय हो जाता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश के पद भी, लोक भी महाप्रलय में विलय हो जाते हैं लेकिन वह परमात्मा वैसे-का-वैसा ही रहता है इसलिए वह अच्युत है। वह ब्रह्मा, विष्णु, महेश का भी आत्मा बन बैठा है और मेरा-तुम्हारा भी। अच्युत की स्मृति रक्त के कणों को पावन करती है, अपने सद्गुण भी भर देती है।

मैं आपको ऐसी साधना की तरफ ले जाता हूँ कि भगवान की स्मृति सहज में हो जाय । सत्संग ही सबसे बड़ी साधना है । जहाँ भी कुछ बातचीत हो तो बस, अच्युत-स्मृति... यही साधना है।

दो युवतियाँ बातचीत करती हुई जा रही थीं । एक ने कहा : 'मेरे पति ने मेरे को बहुत बढ़िया नथनी ला दी है, मेरी नथनी ऐसी है...' कबीरजी को यह सुनकर दया आ गयी। उन्होंने कहा :

नथनी दीन्ही यार ने सुमिरति बारंबार ।
नाक दिन्हों करतार ने ताको दिया बिसार ॥

यार ने, पति ने नथनी दी उसका सुमिरन कर रही है बेटी ! हाय-रे-हाय ! कितना जुल्म कर दिया अपने साथ ! कितना अन्याय कर दिया ! नथनी का सुमिरन करती है ! तू तो सुमिरन कर उस दाता का जिसने तुझे नाक दी। जो तेरा था, तेरा है, तेरा रहेगा, जिसको तू छोड़ नहीं सकती उसका सुमिरन कर ले।

कबीरजी की कैसी भगवत्स्मृति थी ! जो तुम्हारा था, है और रहेगा उसका सुमिरन बढ़ा दो तो राग-द्वेष में भी शांति हो जायेगी, भय-क्रोध में भी शांति हो जायेगी। काम- विकार का तो तलिया ही बैठ जायेगा । लोभ-लालच से मन थोड़ा ऊपर उठ जायेगा । चिंतारूपी डाकिनी से पल्ला छूट जायेगा।

'इधर जाऊँ, उधर जाऊँ... उधर अच्छी जगह है, उधर अच्छी जगह है...' हरि की स्मृति बढ़ा दे लल्लू ! काहे को चिंता करते हो ? बस, अच्युत की स्मृति !

जिसके प्रति द्वेष हो वह भाई हो, बहन हो, पड़ोसिन हो, उसको मानसिक रूप से हाथ जोड़कर कहो कि 'मेरे को आपका सुमिरन तो बार-बार आता है लेकिन द्वेष-बुद्धि से आता है । मेरे ऊपर दया करो। आपकी गहराई में जो बैठा है और आपका सुमिरन जिसकी सत्ता से होता है तथा आप जिसकी सत्ता से हो उसका जरा सुमिरन दे दो प्रभु !'

भगवान का सुमिरन नहीं हो रहा तो बोलो : 'महाराज ! सुमिरन नहीं हो रहा है। हरे ! हरे ! हाय ! हाय ! हरि-हरि !' सुमिरन नहीं हो रहा है, इस बात का सुमिरन करो तब भी सुमिरन हो जायेगा। और भगवान का नाम या सुमिरन कोई कर्म नहीं, भगवत्पुकार है। पुकार कैसी भी हो - बच्चा ऊवाँ-ऊवाँ करके भी माँ को पुकार लेता है, माँ समझती है कि मुझे बुलाता है। ऐसे ही किसी भी नाम से, किसी भी भाव से भगवान को पुकारो, भगवत्सुमिरन करो । पक्षियों को देखकर भी सोचो कि 'आहा ! क्या मेरे लाल की लीला है !' कोई कुछ सुना दे, कोई विपदा आ जाय, कोई मुसीबत आ जाय तो भगवान का सुमिरन करो कि 'वाह ! तू विपदा और मुसीबत भेजकर मेरी आसक्ति मिटा रहा है।' विपदा की ऐसी-तैसी हो जायेगी, विपदा संपदा में बदल जायेगी क्योंकि हरि का सुमिरन है !

हरिस्मृतिः सर्वविपद्विमोक्षणम् ।

'भगवान की स्मृति सर्व विपत्तियों से मुक्त कर देती है।'
(श्रीमद्भागवत : ८.१०.५५)

दीन दयाल बिरिदु संभारी । हरहु नाथ मम संकट भारी ॥
(श्रीरामचरित. सुं.कां. : २६.२)

(शेष पृष्ठ ७ पर)

तुम्हारा परम पावन कर्तव्य

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

'जितने भी चराचर पदार्थ हैं, वे सब मिथ्या हैं, अवस्तुमात्र हैं। धिक्कार है उसे जो दिखावटी रूपों पर सत्य को न्योछावर कर देता है! मैं सत्य हूँ। मैं देह की प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए आत्मघात करने को कदापि तैयार नहीं हो सकता।' - ऐसा सोचो।

हरगिज मत सोचो कि तुम कभी भी नीचे घसीटे जाओगे अथवा नीचे धकेल दिये जाओगे। तुम्हारे चित्त में ऐसा आत्मनशा होना चाहिए कि उसमें पड़ते ही दुनियादारी के तुच्छ विचार गल जायें तो तुम्हारी उन्नति निश्चित है, तुम्हारा निहाल होना स्वाभाविक है। ॐ... ॐ... ॐ... ॐ...

थकावट, घबड़ाहट के सभी अवसरों पर 'ॐ' का उच्चारण करो। ॐ... ॐ... ॐ... ॐ... यह सारा लौकिक और वैदिक व्यवहार अविद्या का ही विषय है। परमात्मा पर विश्वास रखकर अपनी जीवन-डोरी उसके चरणों से सदा के लिए बाँध दो। फिर निर्भयता तो तुम्हारे चरणों की दासी बन जायेगी। बाह्य दुःखों और चिंताओं को आनन्द से आने दो क्योंकि ये आये हैं तो जानेवाले हैं। तुम नित्य नारायण की स्मृति करो। अच्युत की स्मृतिमात्र से उनके प्रभाव को तुच्छ कर डालो और विपदाओं का कारण खोज लो। किसी भी विषय, वस्तु और व्यक्ति के निमित्त जो विफलता आयी है वह अहंकार, आसक्ति और दोष को मिटाने के लिए; स्वप्नतुल्य संसार से सावधान करने के लिए है, भगवद् स्मृति कराने के लिए है। हर आँधी-तूफान के बाद शुद्ध हवा मिलती है, कोई भी विपदा आये तो संयम, सावधानी और सत्यस्वरूप ईश्वर की स्मृति दिलाने को आयी है उसका स्वागत करो। डरो मत, अपनेको कोसो मत। दूसरों पर दोषारोपण मत करो। अड़ोस-पड़ोस में ही वेदांत को व्यवहार में लाओ।

अपने-आपको नित्य शांत और प्रसन्न रखना ही अपने सारे उद्योग-धंधे, व्यापार-पेशा, वृत्ति और जीवन का एकमात्र लक्ष्य एवं उद्देश्य बना लो। इस संसार में तुम्हारा परम पावन कर्तव्य यही है, जो तुम पर ईश्वर ने डाला हुआ है।

सब वस्तुओं में ब्रह्म को देखने में तुम सफल न होओ तो कम-से-कम एक ऐसे व्यक्ति में जिसको तुम सबसे अधिक प्रेम करते हो, उस (ब्रह्म) का दर्शन करने की चेष्टा करो। इसी प्रकार तुम आगे बढ़ सकते हो।

अपने-आपको नित्य शांत और प्रसन्न रखना ही अपने सारे उद्योग-धंधे, व्यापार-पेशा, वृत्ति और जीवन का एकमात्र लक्ष्य एवं उद्देश्य बना लो। इस संसार में तुम्हारा परम पावन कर्तव्य यही है, जो तुम पर ईश्वर ने डाला हुआ है। अपने-आपको प्रसन्न रखना है। इसके सिवाय अन्य किसी बात की परवाह मत करो।

किसीके दोष को देखकर उससे घृणा न करो, न उसका बुरा चाहो। दूसरे के पापों को प्रकट करने के बदले सुदृढ़ बनकर ढँको।

त्याग का अर्थ वैराग्य या वन-प्रस्थान नहीं है। त्याग का अर्थ प्रत्येक वस्तु को पवित्र बनाना है, उसे ईश्वर समझना है। प्रत्येक वस्तु में परमात्मा के दर्शन करना, नाम-रूप की ममता का बाध करना ही वेदांत के अनुसार त्याग है।

एक मैं ही मैं हूँ यह जो ज्ञान है,
द्वैत नहीं फिर सोच का क्या काम है ?

जब तुम कोई काम करके लोगों की समालोचनाएँ और अपने अनुकूल आलोचनाएँ तथा लोगों की तारीफें व लोगों की खुशामदें करते हो, तब तुम्हारी शक्ति तुरंत जाती रहती है। जब तुम आत्मा से विमुख होगे, तब सब पदार्थ तुम्हें छोड़ जायेंगे। जब तुमने अपने अंतरात्मा का दृढ़ निश्चय से आश्रय लिया, तब सारा संसार कुत्ते के

समान तुम्हारे पैर चाटने की इच्छा करेगा। संसार के पीछे मत दौड़ो।

यदि तुम अपना यह विश्वास बना सकते हो कि तुम सदैव मुक्त हो तो तुम विश्व-ब्रह्मांड के उद्धारक हो जाते हो। यदि तुम यह निश्चय करो कि तुम शरीर कभी नहीं थे, यदि तुम वेदांत के स्वर-में-स्वर मिलाकर विश्वास करो कि तुम सदैव से मुक्त हो तो तुम अखिल जगत के मोक्षदाता हो जाते हो। 'मैं सर्व हूँ, मैं अखिल विश्व हूँ, मैं अनन्त हूँ'- ऐसा अनुभव जब तुम करने लगते हो, तब तुम समग्र हो जाते हो और शारीरिक रोग, पीड़ा, व्यथा, चिंता तक दूर हो जाती हैं, उड़ जाती हैं, छिन्न-भिन्न हो जाती हैं।

यदि संसार के दूसरे पदार्थ या सुख आ मिलते हैं तो तुम्हें कहना चाहिए कि 'ऐ शैतान ! हट मेरे सामने से। तेरे हाथों से मुझे कुछ नहीं चाहिए।' तब देखो, तुम कितने सुखी होते हो ! तब तुम स्वयं स्वर्ग हो जाते हो ! बाहरी पदार्थों की अपेक्षा सत्य पर अधिक विश्वास रखो। अपनी इन्द्रियों के बहकावे में मत आओ।

सारा ब्रह्माण्ड एक शरीर है। सारा संसार एक शरीर है। जब तक तुम हरेक से अपनी एकता का अनुभव करते रहोगे, तब तक सभी परिस्थितियाँ और आस-पास की चीजें, हवा और लहरें तक तुम्हारे पक्ष में रहेंगी।

अपने परिश्रमों के पुरस्कार के लिए चिंता न करो। भविष्य की परवाह मत करो। संशयों को त्याग दो। सफलता-असफलता का विचार न करो। अपने ईश्वरत्व में सजीव विश्वास रखो, फिर कोई तुम्हारी हानि न कर सकेगा। कोई भी तुम्हें क्षति न पहुँचा सकेगा।

जिस क्षण तुम ईश्वरभाव से परिपूर्ण हो जाओगे, उसी क्षण अनायास सदा के लिए जीवन में शक्ति और उत्साह की धारा बहने लगेगी। सत्यों को फैलाने का यही उपाय है। जो कोई तुम्हारे पास आये, उसे परमेश्वरवत् ग्रहण करो पर साथ-ही-साथ अपनेको भी तुच्छ मत समझो। अद्वैत अवस्था में देखने, सुनने और समझने की कोई चीज ही नहीं रहती, सब कुछ आत्मा ही हो जाता है।

(पृष्ठ ५ का शेष)

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोई।
जब तव सुमिरन भजन न होई॥
(श्रीरामचरित. सुं.कां. : ३१.२)

आप पक्का कर लो कि सबसे ज्यादा दुःखदायी वह समय है जब भगवान का सुमिरन नहीं होता। सबसे बड़ा यही संकट है और यही विपत्ति का काला समय है। जब भगवान का सुमिरन नहीं होगा तो काम का, क्रोध का, लोभ का, मोह का, नश्वर का सुमिरन होगा। वह नाश की तरफ ले जायेगा बेटे ! काहे को बार-बार जन्मना, बार-बार मरना, बार-बार नीच योनियों में जाना, गर्भ नहीं मिले तो नालियों में बहना - काहे को अपनी दुर्दशा करें ? बस सरल उपाय है - सुमिरन।

अपने इष्टदेव से प्रार्थना करो कि 'हे प्रभु ! मुझे तेरा सुमिरन करना पड़ता है। मेरी इस दुर्दशा पर दया करो। मैं तेरा सुमिरन करूँ नहीं बल्कि होने लग जाय कि तुम सच्चिदानंद हो, आनंदकंद हो, साक्षीस्वरूप हो, चैतन्यस्वरूप हो, मेरे निज आत्मा हो। तुम्हीं प्रकृति रूप हो, तुम्हीं ईश्वर रूप हो, तुम्हीं मेरे सहित वासुदेवस्वरूप हो, मुझ सहित सर्व रूपों में बसे हो। मुझ सहित अँगड़ाई ले रहे हो।

जैसे लोभी को धन का सुमिरन होने लगता है, कामी को कामिनी का सुमिरन होने लगता है, मोही को परिवार का सुमिरन होने लगता है, ऐसे ही भक्त को भगवान का सुमिरन होने लग जाय तो कितना अच्छा है ! हे प्रभु ! जगत की स्मृति दुःखद, बंधन रूप और जन्म-मरण देनेवाली है। तेरी स्मृति सुखद, ज्ञान, आनंद और समता में स्थित करनेवाली है। तू दयालु है। मुझ पर दया कर। मुझे अपनी स्मृति का दान दे, अपनी प्रीति का दान दे दे, अपनी भक्ति से संपन्न संतों के संग में व उनकी कृपा में रँग दे। आपकी कृपा की आशा की किरण तो मेरे पास है। अब मुझे सुमिरन करना नहीं पड़ेगा, सहज में हो जायेगा।' **ॐ... ॐ... ॐ... सच्चिदानंदरूपाय। जगत उत्पत्ति आदि हेतवे...**

कुंभ पर्व में सत्संग, संयम तथा साधना होती है

- पूज्य बापूजी

कुंभ पर्व की बड़ी भारी महिमा है । कुंभ में नदी के जल में स्नान करने का विशेष माहात्म्य बताया गया है । इससे शरीर की शुद्धि तो होती ही है, साथ ही जल में जो तेज अंश की प्रधानता है उससे हमारे मन के दोषों के नष्ट होने में सहायता मिलती है । फलतः मन की प्रसन्नता बढ़ती है ।

कुंभ में संत-महात्माओं का सत्संग-सान्निध्य मिलता है। उनके सान्निध्य का हेतु है कि हमारा मन अपनी जन्म-जन्मांतरों की वासनाओं का अंत करके भगवत्सुख में, भगवत्शांति में, भगवत्प्रसाद में जाने को तैयार हो और मति के साथ मिलकर मतिदाता में विश्रांति पाये ।

कुंभ में तीन लाभ होते हैं :

(१) तीर्थभूमि के प्रभाव से शरीरिक दोषों की निवृत्ति ।
(२) स्नान, जप-तपादि से मन के दोषों की निवृत्ति ।
(३) सत्संग से बुद्धिगत दोषों की निवृत्ति ।

तन, मन व मति के दोष की निवृत्ति के लिए तीर्थ और कुंभ का पर्व है ।

कुछ लोग 'कुंभ मेला' बोलते हैं । यह बहुत अन्याय हो रहा है । हकीकत में कुंभ मेला नहीं है । सामान्यतः मेला एक-दो दिन, चार दिन का होता है और उसमें लोगों की भीड़ होती है । जहाँ बहुत लोग इकट्ठे होते हैं, वहाँ 'मेला' शब्द का उपयोग होता है लेकिन कुंभ मेला नहीं, पर्व है ।

हिन्दुस्तान तो क्या पूरी धरती पर जप, स्नान, दान-सत्संग का मेला एक महीने तक कुंभ के सिवाय कहीं भी नहीं होता, संभव ही नहीं है । बिल्कुल पक्की बात है । मेले में तो झूले होते हैं, खिलौने होते हैं, फैशनपरस्त लोगों की बहुलता होती है । वहाँ के वातावरण में रजोगुण बढ़ता है, चंचलता बढ़ती है । कई मेलों में ऊँट-घोड़े-गधे आदि का क्रय-विक्रय होता है ।

कुंभ में न खरीदी की बहुलता है, न जानवरों का क्रय-विक्रय है, न झूले आदि का महत्त्व है । कुंभ पर्व में यह सब नहीं होता । इसमें तो सत्संग, संयम तथा साधना होती है । साधु व समाज आपस में भगवत्संबंधी, साधना-संबंधी चर्चा करते हैं । साधुओं का संग करके भक्त अपनी साधना में आगे बढ़ने का प्रयास करते हैं ।

यहाँ वैसी भीड़ नहीं होती, जैसी मेले में तमाशबीन लोगों की होती है । कुंभ पर्व में ज्यादातर श्रद्धा-भक्ति से भरे हुए तथा तपस्या, साधना में रुचिवाले लोग आते हैं ।

पर्व, व्रत, उपवास और त्यौहारों का क्या प्रयोजन है ?

पर्व : त्रिवर्षों की संधिगाँठ, वर्षों की संधिगाँठ, महीनों की संधिगाँठ... पूर्णिमा, अमावस्या, अष्टमी, संक्रांति और कुंभ - ये पर्व माने जाते हैं ।

इन पर्वों का प्रयोजन है कि विशेष अवसर पर विशेष यज्ञ, जप-तप, साधन-भजन और ऋतु-परिवर्तन का तन, मन और मति को लाभ मिले ।

पर्वों से उल्लास-आनंद का प्राकट्य होने में मदद मिलती है । जैसे वर्षा और शरद ऋतु का संधिकाल, दीपावली, आश्विन पूर्णिमा, कौमुदी महोत्सव आदि - ये पर्व हार्दिक प्रसन्नता देते हैं ।

माघ मास में यदि सुबह सूर्योदय से पहले स्नान कर लें तो नरक में जाने या अधोगति होने का सवाल ही पैदा

नहीं होता । इसका सीधा संबंध स्वास्थ्य से एवं मन की प्रसन्नता से है । प्रसन्न मन ही सफलता की कुंजियाँ ले आता है । खिन्न और संशयात्मक मन विनाश के गर्त में ले जाता है ।

व्रत : व्रत उसे कहा जाता है जिसमें धार्मिक अनुष्ठान किये जाते हैं, व्यक्तिगत जीवन में विकास और उसकी कमियों को निकालने का दृढ़ संकल्प किया जाता है । कैसी भी परिस्थिति आये, उससे न डिगने के संकल्प को व्रत कहते हैं ।

शास्त्र के नियमानुसार आचरण करना, पुण्य-तिथियों के अवसर पर उपवास आदि करना - इसे व्रत कहते हैं । जैसे - शिवरात्रि व्रत, पूर्णिमा व्रत, एकादशी व्रत । इनसे पुण्य और मानसिक ऊँचाई की प्राप्ति होती है । पूनम व्रतधारी व्रत रखते हैं कि 'कुछ भी हो, पूनम के दिन दर्शन करके ही अन्न-प्रसाद लेना है ।' इस प्रकार व्रत से दृढ़ता आती है ।

कर्मानुष्ठान करना, पुण्य-संचय करना, इन्द्रियों व मन का संयम करना, किये हुए सत्संकल्प पर दृढ़ता से डटे रहना, शारीरिक संताप व कष्ट सहकर भी अपने ऊँचे उद्देश्य के लिए डटे रहना - इसे भी व्रत कहते हैं ।

उपवास : 'उप' माने समीप, 'वास' माने बैठना । अपने आत्मा के समीप वृत्तियों को बैठाना - यह उपवास का उद्देश्य है । उपवास से तन-मन के दोषों का शमन होता है तथा स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है ।

त्यौहार : सामूहिक आनंद, स्वास्थ्य और ऋतु-परिवर्तन का स्वयं लाभ उठाना तथा इसमें दूसरों को भी सहायभूत होना - यह त्यौहारों का उद्देश्य होता है ।

'अग्नि पुराण' के १७५वें अध्याय के १०वें व ११वें श्लोक में लिखा है :

क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
देवपूजाऽग्निहवनः संतोषोऽस्तेयमेव च ।
सर्वव्रतेष्वयं धर्मः सामान्यो दशधा स्मृतः ॥

सभी व्रतों में व्रत के पालनकर्ता में दस गुण सामान्यतः आवश्यक माने गये हैं :

(१) जरा-जरा बात में नाराज न हो जायें, चिढ़ न जायें अपितु क्षमाशील हों । (२) सत्य (३) दया (४) दान (५) शौच अर्थात् तन की सफाई, इन्द्रियों और मन की पवित्रता । (६) इन्द्रिय-संयम (७) देवता-इष्ट-भगवान का पूजन : चाहे आत्मदेव का करो, चाहे मंदिर के देव का । (८) हवन या अग्निहोत्र (९) संतोष (१०) अस्तेय (चोरी का अभाव) ।

पर्व, व्रत और त्यौहारों का सम्पूर्ण लाभ उठाने के लिए हममें ये १० गुण जरूर होने चाहिए । इन १० नियमों का पालन होना ही चाहिए । इससे व्यक्ति का विकास होता है, छुपी हुई भगवत्शक्ति, मानसिक शक्ति और बौद्धिक शक्ति जाग्रत होती है ।

मनुष्य से श्रेष्ठ सुर (देवता) भी नहीं और असुर भी नहीं हैं । सुरों को ऐसी सुविधाएँ मिलती हैं कि उन्हें 'आत्मसुख पाना चाहिए, परमात्म-प्राकट्य करना चाहिए ।' - यह सोचने का भी समय नहीं मिलता । असुरों में ऐसा तमस् भरा होता है कि उनकी मति में परमात्मप्राप्ति की गति ही नहीं होती । पशु तो बेचारा खाने-पीने तक का ही ज्ञान रखता है । मनुष्य ही ऐसा है जो नित्य-अनित्य वस्तु का विचार कर सकता है । मनुष्य के लिए ही पर्व, व्रत, उपवास और त्यौहार हैं । ये आत्मिक उन्नति के सहायक साधन हैं ।

तीर्थराज प्रयाग में विक्रम संवत् २०६३ पौष शुक्ल पूर्णिमा तदनुसार बुधवार ३ जनवरी २००७ से अर्धकुंभ महापर्व प्रारम्भ हो रहा है । जिसमें २० से २८ जनवरी तक पूज्य बापूजी के सत्संग की संभावना पक्की हो रही है । इस महापर्व में देश-विदेश के लाखों श्रद्धालुगण तथा संत-महात्मा पधारके गंगा-स्नान, दान एवं सत्संग के द्वारा अक्षय पुण्य का अर्जन करेंगे ।

कुंभ स्नान की प्रमुख तिथियाँ

पूर्णिमा : ३ जनवरी ०७ बुधवार
मकर संक्रांति : १४ जनवरी ०७ रविवार
मौनी अमावस्या : १९ जनवरी ०७ शुक्रवार
वसंत पंचमी : २३ जनवरी ०७ मंगलवार
रथ सप्तमी : २५ जनवरी ०७ गुरुवार
माघी पूर्णिमा : २ फरवरी ०७ शुक्रवार

कथा प्रसंग

जे उर अन्तर नाम होय, तो जूनी बहुर न जाय

– संत गरीबदासजी

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

हरियाणा की भूमि जिसके चप्पे-चप्पे, नगर-नगर, डगर-डगर पर महापुरुषों का अवतरण हुआ है, के रोहतक जिले के छुड़ानी गाँव में १७१७ ई. में वैशाख पूर्णिमा के दिन पिता श्री बलराम और माता श्रीमती रानीदेवी के घर संत गरीबदास प्रकट हुए । गरीबदासजी भले गरीब थे लेकिन दिल के इतने अमीर बने कि उनके हृदय में वेदांत और तत्त्वज्ञान की बातें उभरती थीं । वे अपने-आपको कबीरजी का शिष्य मानते थे ।

कहा जाता है कि एक बार माता रानीदेवी कुएँ से पानी भर रही थीं । गरीबदासजी तब माता के गर्भ में ही थे। वहाँ से गुजर रहे दो साधुओं ने रानीदेवी के चरण छुए। माता ने पूछा : ''साधु बाबा ! आपने मेरे चरण क्यों छुए ?''

''तुम्हारे पेट में एक महान आत्मा है, जो संत गरीबदास नाम से प्रसिद्ध होंगे और लोगों को ज्ञान का प्रकाश देंगे। हमने उनके चरण छुए हैं।'' इतना कहकर वे साधु वहाँ से चले गये। कुछ समय के बाद गरीबदास का जन्म हुआ और भी कई छोटी-मोटी चमत्कारिक घटनाएँ उनके जीवन से जुड़ी हुई हैं।

दिल्ली के नवाब मुहम्मदशाह ने संत गरीबदास का यश सुनकर उन्हें अपने दरबार में आमंत्रित किया । गरीबदासजी दिल से अमीरों के भी अमीर थे । उन्होंने संदेश भेजा : 'राजा के दरबार में दो ही प्रकार के व्यक्ति हाजिर होते हैं - एक तो वे जो अपराधी हैं और दूसरे वे जिनको खुशामद करके राजा से कुछ लेना है। मुझे न तो राजा की खुशामद करके कुछ लेना है, न ही मैंने कोई अपराध किया है।'

गरीबदासजी का उत्तर सुनकर नवाब बड़ा प्रसन्न हुआ । फिर नवाब ने गरीबदासजी को नम्रता भरा पत्र लिखा और उनको लाने के लिए समझदार मंत्रियों को भेजा।

संत गरीबदास के दरबार में आने पर नवाब ने उनका यथोचित स्वागत आदि किया । फिर उनसे प्रार्थना की : ''महाराज ! आपकी दुआ चाहिए ताकि मेरा राज्य स्थिर रह सके।''

गरीबदासजी ने कहा : ''तुमको मेरी तीन बातें माननी होंगी - एक तो गोहत्या बंद करा दो । दूसरा- जिस औरत से तुमने विवाह किया है उसीको अपनी औरत मानो और दूसरी जो पकड़ रखी हैं उनको रिहा कर दो। तीसरा- खाने-पीने की चीजों से कर (टैक्स) हटा दो। तब मैं तुम्हें ऐसी दुआ दूँगा कि तुम्हारा राज्य लंबे समय तक टिक सकेगा।''

संत गरीबदास की शर्त मानूँ कि न मानूँ, यह नवाब सोचे, इससे पहले ही गोमांस के गुलाम मंत्रियों, मुल्लाओं ने 'ये तो काफिर हैं। संत गरीबदास कहकर इनको फकीर मानना अल्लाह-ताला की तौहीन है।' आदि कहकर नवाब को खूब भड़काया। गरीबदासजी को जेल में डाल दिया गया।

जवानी हो, धन हो, सत्ता हो और बदमाश, मूर्ख चाटुकार हों तो फिर अनर्थ करने में देर नहीं लगती । जीवन में सत्संग नहीं है तो ये अनर्थ करती हैं, मुसीबतें लाती हैं । गरीबदासजी बड़े चमत्कारिक ढंग से जेल से बाहर आ गये।

संत सताये तीनों जायें, तेज बल और वंश।

एक वर्ष पूरा हुआ-न-हुआ नादिरशाह ने मुगलों पर आक्रमण कर दिया और साथ ही उस इलाके में भयंकर सूखा पड़ा, जिससे सारा मुगल साम्राज्य तहस-नहस हो गया।

राज्य तो गया, यश भी गया। नवाब मुहम्मदशाह संत की तीनों बातें मान लेता तो बाहर से भी स्वस्थ रहता और उसका राजपद भी बना रहता।

जिस व्यक्ति के जीवन में सत्संग नहीं है उसको इस बात का विवेक नहीं रहता कि किस परिस्थिति में क्या करना चाहिए ? सत्संग सुनता है तो उसका विवेक जगता है । संतों के सान्निध्य से उसे जीवन जीने की कला आती है। संत गरीबदासजी कहते हैं :

गरीब लख चौरासी बन्ध तैं, सतगुरु लेत छुटाय ।
जे उर अन्तर नाम होय, तो जूनी बहुर न जाय ॥

चौरासी लाख योनियों के बंधनों में बँधा जीव 'यह मिले तो सुखी... वह मिले तो सुखी... यह भोगूँ तो सुखी...' ऐसा सोचते-सोचते सुखी होने के चक्कर में ही रोगग्रस्त होकर मर जाता है। केवल सद्गुरु ही तारणहार हैं, जो जीव को चौरासी लाख योनियों के बंधनों से मुक्त कराते हैं। सद्गुरु जब शिष्य को मंत्रदीक्षा देते हैं तो उसकी सुषुप्त शक्तियाँ जाग्रत होती हैं, उसके अंदर के रहस्य खुलते हैं। नाम-कमायी कर वह भवसागर से पार हो जाता है, फिर उसका पुनर्जन्म नहीं होता।

गरीब यौह माटी का महल है, जासे कैसा नेह ।
जे साँईं मिल जात हैं, तो नारायण देह ॥

हे मानव ! तेरा यह शरीर मिट्टी का महल है, इससे तू क्या प्रीति करता है ? परमात्मा की भक्ति करके अगर तू उसे जान लेता है तो तेरे इस शरीर का मूल्य है और तभी तेरी यह नर देह नारायणस्वरूप हो सकती है।

गरीब काया माया काल है, बिन साहिब के नाम ।
चेत सकै तौ चेतिये, बिन सन्तों नहीं ठाम ॥

हे मानव ! मनुष्य-जीवन पाकर अगर तुमने भगवान का सुमिरन-भजन नहीं किया तो तेरा जीवन व्यर्थ है। मौत आ जाय उससे पहले तू संतों के पास जाकर उस प्यारे परमात्मा को जान ले।

मनुष्य-जीवन इसलिए मिला है कि मनुष्य अपने साध्य को पा ले । मनुष्य की मनुष्यता भी इसमें है कि वह साधु बन जाय। साधु किसको कहते हैं ?

साध्यते परं कार्यं इति साधुः ।

जो परम कार्य को साध ले उसको साधु बोलते हैं।

परम कार्य क्या है ? बरसों से जो जीव इन्द्रियों की गुलामी कर रहा है, उससे वह आजाद हो जाय, दुःखों से आजाद हो जाय, चिंताओं से आजाद हो जाय और प्रकृति के प्रभाव से आजाद होकर अपने आत्मा-परमात्मा को पा ले।

सत्संग सुनना, भगवान का नाम-जप करना, दीनों पर दया करना, श्रेष्ठ पुरुषों का सान्निध्य-सेवन करना, माता-पिता की सेवा करना और जीव-जंतुओं पर दया करना - यह सब सद्भाव के अंदर आता है । जीवन में सद्भाव होना अच्छा है लेकिन समझदार (सर्वोच्च समझ के धनी आत्मज्ञानी महापुरुष) सद्भाव का मार्गदर्शन करें और सदाचरण से सद्भाव की पूर्ति हो यह भी आवश्यक है। शास्त्र के ज्ञान से सदाचरण का पता चलता है। सुबह सूर्य उगने से पहले उठने से बुद्धि में सद्भाव और सदाचार का बल बढ़ता है।

जीवन में सदाचरण हो, दूसरा समझदारी हो और तीसरा सद्भाव हो तो आपकी गाड़ी ठीक रास्ते पर चल पड़ेगी । आपका परम कार्य जल्दी सध जायेगा, जिसके लिए आपको मानव-जीवन मिला है।

श्री गरीबदासजी की वाणी

सतगुरु पारस रुप हैं, हमरी लोहा जात ।
हम तो लोहा कठिन हैं, सतगुरु बने लोहार ॥
ये पुरपट्टन ये गली, बहुरि न देखै आय ।
सतगुरु सूँ सौदा हुआ, भर ले माल अघाय ॥
रामनाम निज सार है, रामनाम निज मूल ।
रामनाम सौदा करो, रामनाम नहीं भूल ॥
साँचे कूँ परनाम है, झूठे के सिर दंड ।
ठौर नहीं तिहुँ लोक में, भरमत है नौ खंड ॥
त्रिकुटी महल में आसन मारो, जहँ न चलै जम जोरा।
दास गरीब भक्ति को कीजो, हुआ जाट है भोरा ॥

परमात्मध्यान लाये जीवन में ज्ञान

● पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

पूरे विश्व का ज्ञान मिल जाय, जगत की वस्तुएँ मिल जायें, जगत की वाहवाही मिल जाय लेकिन तुम कौन हो इसका ज्ञान न मिले और इसमें विश्रांति न मिले तो सारा मिला हुआ छूट जाता है। जिसकी सत्ता से आँखें देखती हैं, जिसकी शक्ति से कान सुनते हैं, जिसकी शक्ति से दिल धड़कता है, उस शक्तिदाता में अपनी बुद्धि को कभी-कभी विश्रांति देने का प्रयोग करो। सर्वत्र व्यापक सत्ता एक ही है। मन और बुद्धि जितने प्रमाण में उसमें विश्रांति पाते हैं, उतने वे दिव्य हो जाते हैं। इस व्यापक सत्ता में सर्वथा विश्राम पाने का यत्न करना चाहिए।

'फलाने का फलाना कर्तव्य है और मेरा यह अधिकार है' यह गलती थी इसीलिए हम दुःखी थे। 'सामनेवाले का कर्तव्य वह करे-न-करे, मेरा कर्तव्य मैं कर लूँ।' इस प्रकार सामनेवालों के अधिकार की रक्षा करो, बाकी का समय विश्राम में जाय। इससे हृदय शांतात्मा होने लगेगा। मन इधर-उधर जाय तो हरिॐ शांति... आनंद ॐ... माधुर्य ॐ... बीच-बीच में एक मिनट, आधे मिनट की विश्रांति। इससे तुम्हारा आधिभौतिक कार्य भी सुंदर-सुहावना होगा, आधिदैविक शक्तियों का विकास होगा और आध्यात्मिक तत्त्व के ज्ञान में विश्रांति पाकर बुद्धि सूक्ष्म बनेगी, पैनी बनेगी।

हथौड़ी से कपड़ा नहीं सीया जाता। कपड़ा सीना है तो सुई चाहिए। जबकि सुई भी लोहे की, हथौड़ी भी लोहे की। हथौड़ी ताला तोड़ती है, चाबी ताला खोलती है और सुई कपड़ा जोड़ती है - हैं तीनों लोहे के। ऐसे ही एकदम मोटी बुद्धि तोड़ेगी, मध्यम बुद्धि कुछ राज खोलेगी और सूक्ष्म बुद्धि तो जैसे सुई दो कपड़ों को जोड़ देती है, ऐसे ही जीवात्मा-परमात्मा का मिलन करायेगी। आत्मा-परमात्मा का मिलन करानेवाली सूक्ष्म मति बना लो तो तुम्हारा मंगल हो जायेगा। इसलिए व्यर्थ का देखो नहीं, व्यर्थ का घूमो नहीं, व्यर्थ का खाओ नहीं, व्यर्थ का बोलो नहीं, व्यर्थ का सोचो नहीं।

प्रारब्ध पहले रच्यो, पीछे भयो शरीर।
तुलसी चिंता क्या करे, भज ले श्रीरघुवीर ॥

लक्ष्य ऊँचा रखो, ऊँचों से संगति करो, फिर देखो भगवान की कृपा तुम्हारे हृदय में चमचम चमकने लगेगी;

(शेष पृष्ठ १५ पर)

ज्ञाननिष्ठ श्री गणेशानन्द 'अवधूत'

– स्वामी श्री अखंडानंद सरस्वती

(गतांक से आगे)

दूसरे दिन जब मैं कानूनगो साहब के निवास-स्थान पर गया तो ज्ञात हुआ कि गणेशजी बहुत बीमार हो गये हैं और कहते हैं : 'पण्डितजी (अखंडानंदजी सरस्वती) ने मुझे विष पिला दिया है। उसमें कानूनगो साहब की भी सलाह है। अब मैं मर जाऊँगा या पागल हो जाऊँगा।' कानूनगो साहब के निवास-स्थान के पास ही उनका घर था, इसलिए हमलोग तुरंत उनके घर गये। वे पलंग पर पड़े हुए थे। पहले तो हम लोगों को खूब फटकारा। फिर लोगों से कहा कि 'सब लोग यहाँ से निकल जाओ। मैं इनसे बात करूँगा।' मुझसे कहा कि 'बस, अब मैं नहीं छोड़ूँगा, परिवार ही मुझे छोड़ देगा।'

हम लोग चले आये। वे प्रातःकाल घर से निकलकर गंगातट पर वटवृक्ष के नीचे जा के बैठ गये। दोपहर के समय पास की ही एक बस्ती, जिसमें विजातीय लोग रहते हैं, उनकी रोटी खाना समाज में निन्दित माना जाता था। ऐसी बस्ती से भिक्षा ली और भोजन किया। दो-तीन दिन में ही यह बात बाजार में, घर में फैल गयी और लोग कहने लगे कि वे भ्रष्ट हो गये। इसी बीच एक दिन वे अपने घर में प्रवेश करने लगे तो उनकी पत्नी कमरे में जा छिपी। माताजी ने आकर डाँटा : 'अब तुम घर में मत घुसो, नहीं तो बाल-बच्चों का विवाह कैसे होगा ?' वे पुनः गंगातट पर लौट गये। उनकी माताजी मेरे घर पर आयीं। वे मेरी माँ को ननद जैसा मानती थीं। उन्होंने मुझसे कहा : 'पण्डितजी ! अब आप गणेश को कह दीजिये कि घर में कभी न आये, नहीं तो रस्तोगी जाति में हम लोगों की बदनामी होगी और हम लोग जाति से बाहर कर दिये जायेंगे। बच्चों का विवाह कैसे होगा ?' मैंने उनकी बात गणेशजी को कह दी और वे मिट्टी की एक हँडिया लेकर वहाँ से निकल गये तथा भिक्षा माँगकर अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

आज जब मैं सोचता हूँ कि ८५ वर्ष की उम्र तक उन्होंने कोई शिष्य नहीं बनाया, कुटी नहीं बनायी, धन नहीं रखा। मान-अपमान पर ध्यान नहीं दिया। किसीसे राग-द्वेष नहीं किया। बालकवत् अपना जीवन व्यतीत किया। तब उनके जीवन की कुछ विशेषताएँ अपने-आप ही स्मृति-पथ में आने लगती हैं।

प्रयाग में अर्धकुंभी मेला था। विरक्तों की टोली गंगा-तट पर दूर रहती थी। श्री उड़िया बाबाजी महाराज, श्री करपात्रीजी महाराज के साथ मैं भी विरक्तों के दर्शन करने गया। विरक्तों में वेदान्त की चर्चा अच्छी रही कि 'तत्त्वज्ञान होने के पश्चात् ज्ञानी के जीवन्मुक्त जीवन की सिद्धि के लिए अविद्या-लेश स्वीकार करना चाहिए कि नहीं ?'

परस्पर सत्संग होने के बाद श्री उड़िया बाबाजी महाराज ने कहा कि ज्ञानी की दृष्टि में न प्रारब्ध है और न तो अविद्या-लेश। वह तो अज्ञानियों के संतोष के लिए उन्हींकी दृष्टि से कल्पित है। उसी सत्संग में गणेशजी को एक हँड़िया लिए 'अवधूत' के वेश में मैंने देखा। विरक्त लोग उनका बहुत आदर करते थे। गौर वर्ण, स्वस्थ शरीर, अपरिग्रह, निर्भयता... मुझे बहुत अच्छा लगा। उस समय मेरे मन में भी वैराग्य की ऐसी ही रूप-रेखा थी।

मैं झूसी (उ.प्र.) में आदरणीय श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी महाराज के संवत्सर-व्यापी संकीर्तन में श्रीमद्भागवत की कथा करता था। गणेशानन्दजी कभी-कभी वहाँ आ जाते थे। उनके हृदय में मेरे प्रति आदर, प्रेम और संबंध का भाव भी था। मेरी बात वे मान लिया करते थे। मैंने उनसे कहा कि 'लँगोटी ढकने के लिए

(शेष पृष्ठ १५ पर)

सबसे मजबूत क्या है ?

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

एक कीड़ा पत्थर में अपना घर बना लेता है तो क्या मनुष्य संकल्प का धन लेकर पैदा होने पर भी केवल अपने दिले-दिलबर में विश्रांति नहीं पा सकता ?

गुरुकुल में एक ऋषि ने शिष्यों से पूछा : ''ऋषिकुमारो ! सबसे मजबूत क्या है ?''

एक बोला- 'लकड़ी', दूसरा बोला- 'पत्थर', तीसरा कहता है- 'लोहा'।

ऋषि ने कहा : ''लोहे से मजबूत क्या होता है ?''

एक शिष्य बोला : ''हीरा।''

ऋषि ने कहा : ''हीरे से मजबूत क्या है ? सबसे मजबूत क्या है ?''

जब कोई विद्यार्थी सही उत्तर नहीं दे पाया, तब ऋषि ने रहस्योद्घाटन करते हुए बताया : ''मनुष्य का संकल्प ही सबसे मजबूत है। वह पर्वत को चूर्ण कर ... है, लोहे को गला सकता है, हीरे को भस्मीभूत ... । मनुष्य के पास ऐसा संकल्पबल है।''

विश्र... साथ न छोड़े उसको बोलते हैं आत्मा-
चाहिए ... जो सदा साथ न रहे उसको बोलते हैं
'फल... क्या ...ले जन्म के शरीर साथ में हैं क्या ?
कर्तव्य है अ... क्या ? ...साथ में नहीं हैं। बचपन साथ में है
है' यह ग... गया लगता रिश्ते-नाते, खिलौने साथ में हैं
दुःखी थे। ... इसलिए ... को जाननेवाला गया क्या ?
करे-न-क... संकल्पबल मनुष्य...
प्रकार स... कि 'मैं जिसको कभ...बसे शक्तिशाली जो
बाकी क... नहीं छोड़ सकता उस... अगर इस ओर मोड़ दें
होने ल... रहूँगा।' और अपनी ओर स...ता, जो मुझे कभी
आनंद ... अपनी तरफ से संकल्प ... को पा के ही
मिनट ... दें तो जितना
सुंदर- ... अंतर्यामी

परमात्मा की सहायता धड़ाधड़-धड़ाधड़ साथ में है । बिल्कुल पक्की बात है । भगवान कहते हैं : **भजन्ते मां दृढव्रताः ।** दृढ़निश्चयी भक्त मुझको सब प्रकार से भजते हैं और **ददामि बुद्धियोगं तं...** मैं उन्हें वह बुद्धियोग (तत्त्वज्ञानरूप योग) देता हूँ।

तुम केवल इतना ही संकल्प कर लो कि मुझे इसी जन्म में सद्गुरु की प्रसन्नता प्राप्त करके अपने आत्मा को पाना है, जो सदा मेरे साथ है उसको जानना है तो तुम्हारा बेड़ा पार हो जायेगा। फिर तुम्हारी जिस पर नजर पड़ेगी वह भी निहाल हो जायेगा, खुशहाल हो जायेगा।

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपः क्रियाः ।
ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसंतोषमात्रतः ॥

'हे देवी ! कल्प पर्यन्त के, करोड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ - ये सब गुरुदेव के संतोषमात्र से सफल हो जाते हैं।'

वह कौन-सा उकदा है जो हो नहीं सकता ?
तेरा जी न चाहे तो हो नहीं सकता॥
छोटा-सा कीड़ा पत्थर में घर करे।
इन्सान क्या दिले दिलबर में घर न करे ?

एक कीड़ा पत्थर में अपना घर बना लेता है तो क्या मनुष्य ऐसा संकल्प का धन लेकर पैदा होने पर भी केवल अपने दिले-दिलबर में विश्रांति नहीं पा सकता ? जरूर पा सकता है परंतु अभागे संसार के आकर्षण - नाक से मजा लेने की, काम-इन्द्रिय से मजा लेने की, जीभ से मजा लेने की, वाहवाही से मजा लेने की गंदी आदत मनुष्य को असली मजे से दूर भटका देती है और वह

सबसे मजबूत क्या है ?

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

एक कीड़ा पत्थर में अपना घर बना लेता है तो क्या मनुष्य संकल्प का धन लेकर पैदा होने पर भी केवल अपने दिले-दिलबर में विश्रांति नहीं पा सकता ?

गुरुकुल में एक ऋषि ने शिष्यों से पूछा : ''ऋषिकुमारो ! सबसे मजबूत क्या है ?''

एक बोला- 'लकड़ी', दूसरा बोला- 'पत्थर', तीसरा कहता है- 'लोहा'।

ऋषि ने कहा : ''लोहे से मजबूत क्या होता है ?''

एक शिष्य बोला : ''हीरा।''

ऋषि ने कहा : ''हीरे से मजबूत क्या है ? सबसे मजबूत क्या है ?''

जब कोई विद्यार्थी सही उत्तर नहीं दे पाया, तब ऋषि ने रहस्योद्घाटन करते हुए बताया : ''मनुष्य का संकल्प ही सबसे मजबूत है। वह पर्वत को चूर्ण कर सकता है, लोहे को गला सकता है, हीरे को भस्मीभूत कर सकता है । मनुष्य के पास ऐसा संकल्पबल है।''

जो कभी साथ न छोड़े उसको बोलते हैं आत्मा-परमात्मा और जो सदा साथ न रहे उसको बोलते हैं संसार व शरीर। अगले जन्म के शरीर साथ में हैं क्या ? अगले जन्म के शरीर साथ में नहीं हैं। बचपन साथ में है क्या ? गया। बचपन के रिश्ते-नाते, खिलौने साथ में हैं क्या ? गये । लेकिन बचपन को जाननेवाला गया क्या ? गया लगता है क्या ?

इसलिए मैं बोलता हूँ सबसे शक्तिशाली जो संकल्पबल मनुष्य के पास है, उसे अगर इस ओर मोड़ दें कि 'मैं जिसको कभी नहीं छोड़ सकता, जो मुझे कभी नहीं छोड़ सकता उस आत्मा-परमात्मा को पा के ही रहूँगा।' और अपनी ओर से पूरा जोर लगा दें तो जितना अपनी तरफ से संकल्प पक्का, उतना अंतर्यामी परमात्मा की सहायता धड़ाधड़-धड़ाधड़ साथ में है । बिल्कुल पक्की बात है । भगवान कहते हैं : **भजन्ते मां दृढव्रताः।** दृढ़निश्चयी भक्त मुझको सब प्रकार से भजते हैं और **ददामि बुद्धियोगं तं...** मैं उन्हें वह बुद्धियोग (तत्त्वज्ञानरूप योग) देता हूँ।

तुम केवल इतना ही संकल्प कर लो कि मुझे इसी जन्म में सद्गुरु की प्रसन्नता प्राप्त करके अपने आत्मा को पाना है, जो सदा मेरे साथ है उसको जानना है तो तुम्हारा बेड़ा पार हो जायेगा। फिर तुम्हारी जिस पर नजर पड़ेगी वह भी निहाल हो जायेगा, खुशहाल हो जायेगा।

आकल्पजन्मकोटीनां यज्ञव्रततपः क्रियाः ।
ताः सर्वाः सफला देवि गुरुसंतोषमात्रतः ॥

'हे देवी ! कल्प पर्यन्त के, करोड़ों जन्मों के यज्ञ, व्रत, तप और शास्त्रोक्त क्रियाएँ - ये सब गुरुदेव के संतोषमात्र से सफल हो जाते हैं।'

वह कौन-सा उकदा है जो हो नहीं सकता ?
तेरा जी न चाहे तो हो नहीं सकता॥
छोटा-सा कीड़ा पत्थर में घर करे।
इन्सान क्या दिले दिलबर में घर न करे ?

एक कीड़ा पत्थर में अपना घर बना लेता है तो क्या मनुष्य ऐसा संकल्प का धन लेकर पैदा होने पर भी केवल अपने दिले-दिलबर में विश्रांति नहीं पा सकता ? जरूर पा सकता है परंतु अभागे संसार के आकर्षण - नाक से मजा लेने की, काम-इन्द्रिय से मजा लेने की, जीभ से मजा लेने की, वाहवाही से मजा लेने की गंदी आदत मनुष्य को असली मजे से दूर भटका देती है और वह

जन्मों-जन्मों तक भटकता रहता है।

जनम-जनम भरमत फिरिओ
मिटिओ न जम को त्रासु।
कहु नानक हरि भजु मना
निरभै पावहि बासु॥

जिस मनुष्य के दृढ़ संकल्प में चट्टानों को चूर्ण करने की शक्ति है, लोहे को पिघलाने की ताकत है; ऐसा मनुष्य नश्वर संसार में सुख ढूँढ़ते-ढूँढ़ते छल-कपट, बेईमानी करके सुख के पीछे भागा जा रहा है और दुःख की लातें खा रहा है।

इन्सान की बदबख्ती अन्दाज से बाहर है।
कमबख्त खुदा होकर बन्दा नजर आता है॥
बन्दगी का था कसूर बन्दा मुझे बना दिया।
मैं खुद से था बेखबर तभी तो सिर झुका दिया॥

यह पक्का कर लो। काहे को परेशान हो रहे हो ? दो रोटी के लिए, दो जोड़ी कपड़ों के लिए झख मार-मार के थक रहे हो। नहीं चाहते हो फिर भी दुःख घूम-घूम के तुम्हारा पल्ला पकड़ता है। ऐसे ही न चाहने पर भी प्रारब्ध में लिखा सुख और रोजी-रोटी, कपड़ा तुम्हारा पल्ला पकड़ेंगे। इरादा ऊँचा कर दो। उदारता, संसारी चाहों का महत्त्व हटाकर परमात्मप्राप्ति की चाह बस, यह कल्याण का राजमार्ग है।

खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तकदीर से पहले।
खुदा तुझसे पूछे कि बन्दे तेरी रजा क्या है ?

(पृष्ठ १२ का शेष)

और संसार की सफलता, ऋद्धि-सिद्धि तुम्हारे कदमों में रहेगी, बिल्कुल पक्की बात है।

लक्ष्य न ओझल होने पाये कदम मिलाकर चल।
सफलता तेरे चरण चूमेगी आज नहीं तो कल॥

लक्ष्य यह बनाना है कि हमें इसी जन्म में भगवद्-ज्ञान, भगवद्-शांति, भगवद्-आनंद पाना है और कदम ऐसे मिलाने हैं कि शास्त्र, गुरु और संत के वचनों के अनुसार अपना जीवन और दिनचर्या हो। फिर संसार की सफलता तो चरण चूमेगी ही और ईश्वरप्राप्ति भी हो जायेगी।

रोज सुबह नींद में से उठकर कम-से-कम ५ मिनट शांत बैठे रहो और यह दृढ़ निश्चय करो कि 'मेरा लक्ष्य भगवत्प्राप्ति का है।' ऊँचा लक्ष्य होगा तो जरा-जरा बात में भय नहीं होगा, जरा-जरा बात में चिंता नहीं होगी, जरा-जरा बात में, मान-अपमान में कुढ़ेंगे नहीं। ५ मिनट तिलक करने के स्थान की जगह भगवान को, गुरु को मानसिक रूप से देखो और ॐ शांति..., ॐ... ॐ... अथवा अपने गुरुमंत्र का जप करो, भगवद् चिंतन करो।

१५ मिनट भोजन करते हो तो ८-१० घंटे बल मिलता है। दिन भर में दो-तीन बार पाँच मिनट का ध्यान तुम्हारे जीवन में आहा ! बीसों घंटे की कार्यशक्ति, प्रसन्नता और विचार को उन्नत करनेवाली सद्भाव की धारा बहायेगा।

(पृष्ठ १३ का शेष)

ऊपर से एक आच्छादन वस्त्र धारण करना चाहिए। यह शास्त्रोक्त है।' उन्होंने वैसा ही किया। एक दिन मैंने उनसे कहा : 'मैं यहाँ भागवत पर प्रवचन करता हूँ परंतु मेरे पास कोई टीका नहीं है।'

उन्होंने किसी गृहस्थ को बता दिया और स्वयं मेले में जाकर 'वंशीधरी टीका' खरीदकर ले आये। उतना बड़ा बोझ शायद उन्होंने कभी नहीं ढोया होगा। मैं स्वयं प्रयाग से गोरखपुर, कल्याण-परिवार में चला गया, तब उनके साथ सम्पर्क प्रायः टूट गया। वे गंगा-किनारे विचरते थे। कभी गाँव में, कभी पेड़ों के नीचे रहा करते थे।'

जब कभी मुझसे मिलते तो यह दोहा प्रायः बोला करते :

ना कछु हुआ, न है कछु, ना कछु होवनहार। अनुभव का दीदार है, अपना रूप अपार॥
पाया कहे सो बावरा, खोया कहे सो कूर। पाया खोया कुछ नहीं, ज्यों-का-त्यों भरपूर॥ (क्रमशः)

(उत्तरायण पर्व : १४ जनवरी २००७ पर विशेष)

सूर्योपासना एवं उसके लाभ

सूर्योदय से पहले स्नानादि करके तैयार हो जायें। फिर सूर्य का प्रकाश ठीक प्रकार से आता हो वहाँ नाभि का भाग खुला करके सूर्यदेव के सामने खड़े रहें। तदनन्तर सूर्यदेव को प्रणाम कर, आँखें बंद करके चिन्तन करें :

'जो सूर्य का आत्मा है वही मेरा आत्मा है। तत्त्वदृष्टि से दोनों की शक्ति समान है।'

फिर आँखें खोलकर नाभि पर सूर्य के नीलवर्ण का आवाहन करें और निम्न मंत्र बोलें :

(१) ॐ मित्राय नमः। (२) ॐ रवये नमः।
(३) ॐ सूर्याय नमः। (४) ॐ भानवे नमः।
(५) ॐ खगाय नमः। (६) ॐ पूष्णे नमः।
(७) ॐ हिरण्यगर्भाय नमः। (८) ॐ मरीचये नमः।
(९) ॐ आदित्याय नमः। (१०) ॐ सवित्रे नमः।
(११) ॐ अर्काय नमः। (१२) ॐ भास्कराय नमः।
(१३) ॐ श्रीसवितृ-सूर्यनारायणाय नमः।

सूर्यनमस्कार करते हुए भी ये मंत्र बोलने चाहिए। इससे बहुत लाभ होता है। सूर्यनमस्कार में आसन व व्यायाम दोनों का समावेश है। (विस्तृत जानकारी के लिए आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'बाल संस्कार' देखें।)

सूर्य को अर्घ्य देने की विधि और लाभ :

प्रातःकाल ताँबे के लोटे में (या जो भी पात्र उपलब्ध हो उसमें) शुद्ध जल भर लें। भगवान सूर्य के सामने खड़े होकर दोनों हाथों से लोटे को ऊँचा उठाकर अर्घ्य दें।

अर्घ्य के जल में (विशेषतः रविवार को) लाल पुष्प, कुमकुम, अक्षत डालने से विशेष लाभ होता है। सूर्य को अर्घ्य देने हेतु निम्न में से कोई एक या सभी मंत्र बोलें :

१. **एहि सूर्य ! सहस्रांशो ! तेजोराशे ! जगत्पते !**
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर !

'हे सहस्रांशो ! हे तेजोराशे ! जगत्पते ! मुझ पर अनुकम्पा करें। भक्तिपूर्वक दिये गये इस अर्घ्य को ग्रहण कीजिये। आपको नमस्कार है।'

२. **ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि।**
तन्नो भानुः प्रचोदयात्। (सूर्य गायत्री मंत्र)
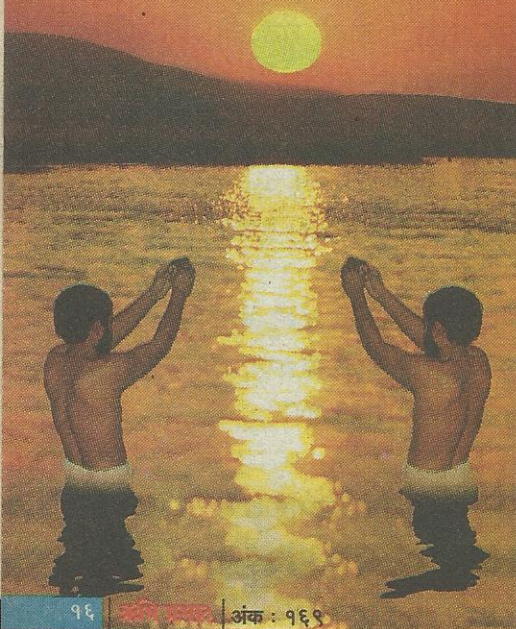
३. ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ (गायत्री मंत्र)

अर्घ्य देने के बाद नीचे गिरे हुए जल को दाहिने हाथ से स्पर्श कर उसे मस्तक और आँखों पर लगायें। अर्घ्य के समय लोटे में थोड़ा-सा जल बचाकर रखें व उसका निम्न मंत्र से आचमन ले लें।

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
सूर्यपादोदकं तीर्थं जठरे धारयाम्यहम् ॥

उपरोक्त विधि से जब भगवान सूर्य को जल अर्पण किया जाता है, तब जल की धारा को पार करती हुई सूर्य की सप्तरंगी किरणें हमारे सिर से पैर तक पड़ती हैं। जो शरीर के सभी भागों को प्रभावित करती हैं। इस क्रिया से हमें स्वतः ही सूर्यकिरणयुक्त जल-चिकित्सा का लाभ मिलता है। इससे अजीर्ण दूर होता है, विकृत गैसें शरीर को प्रभावित नहीं करतीं व शरीर स्वस्थ बना रहता है।

सूर्य बुद्धिशक्ति के स्वामी हैं । उन्हें अर्घ्य देने से बौद्धिक शक्ति में चमत्कारिक लाभ होता है। नेत्रज्योति व ओज-तेज में भी वृद्धि होती है।

सूर्य नमन हेतु मंत्र :

जैसे भगवान विष्णु को स्तुति प्रिय है, वैसे ही सूर्यनारायण को नमस्कार बहुत प्रिय है । अतः निम्नलिखित मंत्रों में से जो अनुकूल पड़े उससे या सभी मंत्रों से सूर्यदेव को नमन करें ।

१. ॐ आरोग्यप्रदायकाय सूर्याय नमः।
२. ॐ ह्रीं ह्रीं सूर्याय नमः।
३. ॐ सूर्याय नमः, ॐ भास्कराय नमः, ॐ आदित्याय नमः।
४. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः।
५. ॐ घृणिः सूर्यः आदित्योम्।
६. ॐ घृणिः सूर्याय नमः।
७. आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर। दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तुते ॥

'हे आदिदेव सूर्यनारायण ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे प्रकाश प्रदान करनेवाले देव ! आप मुझ पर प्रसन्न हों। हे दिवाकर देव ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे तेजोमय देव ! आपको मेरा नमस्कार है।'

सूर्य ध्यान मंत्र :

ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती
नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः।
केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटी
हारी हिरण्मयवपुर्धृतशंखचक्रः ॥

'सवितृमण्डल के भीतर रहनेवाले, पद्मासन में बैठे हुए, केयूर, मकर कुण्डल, किरीट तथा शंख-चक्र धारी, हार पहने हुए स्वर्ण के सदृश देदीप्यमान शरीरवाले भगवान नारायण का सदा ध्यान करना चाहिए।'

सूर्योपासना के लाभ :

यादशक्ति, निर्णयशक्ति, पाचनशक्ति बढ़ती है। सर्दी, खाँसी, श्वास जैसे रोग, जो वायु और कफ के कारण होते हैं, वे दूर हो जाते हैं। शीत प्रकृतिवालों को सदैव सूर्योपासना करनी चाहिए। मासिक स्राव के दिनों में तथा सगर्भावस्था में महिलाएँ सूर्योपासना न करें। गर्मियों में आठ बजे तक, वर्षा ऋतु में जब सूर्यदेव के दर्शन हों तब तथा अन्य ऋतुओं में नौ बजे तक पूजा कर लेनी चाहिए ।

नाभि पर सूर्य की किरणों का आवाहन करने से मणिपुर चक्र का विकास होता है, जिससे बुद्धि विकसित और जठराग्नि प्रदीप्त होती है। जो व्यक्ति सदा सर्दी व खाँसी से पीड़ित रहता हो, जिसकी शीत प्रकृति हो, भोजन ठीक से पचता न हो उसे विशेषरूप से अपनी नाभि पर सूर्य के नीलवर्ण का आवाहन करके सूर्योपासना करनी चाहिए। आज्ञाचक्र पर सूर्य की किरणों का आवाहन करने से भी बुद्धि का विकास होता है। इन सभी मंत्रों में जो विशेष प्रिय व सरल लगे उसे जप सकते हैं ।

पुरुषार्थ, भाग्य और ईश्वरकृपा

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

पुरुषार्थ, भाग्य और ईश्वरकृपा - तीनों में टकराव नहीं सामंजस्य है। बोले : 'जो भाग्य में होगा वह मिलेगा तो पुरुषार्थ क्यों करें ?'

अरे, इतना तो गोपाल भी जानता है कि गायों को ठीक से चराऊँगा नहीं तो दूध कम आयेगा।

तो बोले : 'पुरुषार्थ करना चाहिए तो फिर भाग्य का क्या महत्त्व ? और यदि पुरुषार्थ करने पर भी नहीं होता तो फिर क्या करें ? पुरुषार्थ किया कमाने का, धंधे का, इधर का-उधर का परंतु नहीं होता है तो क्या करें ? सिर पछाड़ें ?'

नहीं। ऐसे में सोचो : 'चलो भाई ! पूर्व का कोई कर्म है, कोई प्रारब्ध है, कोई दोष है। उसको ठीक करें।' और वह भी ठीक नहीं होता है तो सोचो : 'चलो भाई ! ईश्वर का आश्रय लो।'

सभी कामों में ईश्वर का आश्रय लेकर चलना तो अच्छा है, शालीनता है पर केवल ईश्वर-आश्रय, ईश्वर-आश्रय... पापा करे, मम्मी करे... ऐसा करते रहे तो बेटा ! तेरा विकास कैसे होगा ?

कई लोग प्रश्न करते हैं : 'जब भगवान कृपा करेंगे ही तो प्रारब्ध की ऐसी-तैसी और यदि प्रारब्ध में है तो पुरुषार्थ क्यों करें ? अगर पुरुषार्थ से होता है तो प्रारब्ध को क्यों मानें ? और प्रारब्ध तथा पुरुषार्थ से हो जाता है तो भगवत्कृपा को बीच में क्यों लाते हैं ?'

देखो भाई ! कोई बीमार हो गया तो ठीक होने का पुरुषार्थ करे कि न करे ? करना चाहिए। वैद्य के पास जायेगा तो वैद्य कहेगा कि बारिश के दिनों में मंदाग्नि होती है और तुमने थोड़ा भारी खाया। एक दिन-दो दिन शरीर टूटा, और लापरवाही की तो बुखार आया। फिर लापरवाही की, हवाएँ लगीं तो निमोनिया हो गया। अब पुरुषार्थ करो कि हलका-फुलका खाओ, यह दवा लो और ठंडे वातावरण में मत घूमो तो निमोनिया से बचोगे। नहीं तो निमोनिया तुम्हारी जान ले लेगा।

शरीर दुःख की पोटली है। कोई-न-कोई दुःख होता ही है। मन से अपना पुरुषार्थ करो, बुद्धि से कारण ढूँढ़ो और आखिर में भगवत्कृपा का आवाहन कर भगवत्शांति में, ज्ञान में आ जाओ।

वैद्य की बात उसको माननी चाहिए। वैद्य दवा देता है फिर भी ठीक नहीं हो रहे हैं, संयम से रहते हैं फिर भी ठीक नहीं हो रहे हैं तो गये ज्योतिषी के पास, पूछा : ''महाराज ! यह क्या है ?''

ज्योतिषी बोले : ''तुम्हारा पूर्वकृत कर्म है जो प्रारब्ध बना है, अतः ग्रहशांति कराओ, जप-तप करो।'' प्रारब्ध होता है, तब भी रोग के द्वारा भोगना पड़ता है।

अब क्या करें ? ग्रहशांति, जप-तप न करायें ? यह सब कराने से किसीको फायदा हुआ। किसीको वैद्य की दवा दी, जप-तप कराया फिर भी वह मर गया। तो बोले भाई ! **होइहि सोइ जो राम रचि राखा। (श्रीरामचरित. बा.कां : ५१.४)** हमने तो अपने बाप-दादे या बेटे की दवाई करायी, जप-तप कराया लेकिन उनका प्रारब्ध... !

मंद प्रारब्ध होता है तो दवाई आदि से व्यक्ति ठीक होगा। तीव्र प्रारब्ध होगा तो ग्रहशांति और पुण्य से ठीक होगा परंतु उसकी मौत इस निमित्त से होना तरतीव्र प्रारब्ध के अंतर्गत है तो वह मर के ही मानेगा।

भगवान शिवजी सतीजी को समझाते हैं : 'भगवान

रामजी की परीक्षा लेने मत जाओ ।' परंतु सती नहीं मानती। शिवजी सोचते हैं कि 'इसका भाग्य ही विपरीत है इसलिए नहीं मानती।' फिर शिवजी आगे सोचते हैं कि **होइहि सोइ जो राम रचि राखा।** 'जो ईश्वर की नियति होगी वही होगा।'

मन के स्तर पर शिवजी का समझाने का पुरुषार्थ सही है। बुद्धि के स्तर पर शिवजी सोचते हैं कि 'इतना समझाने के बाद भी इतनी पवित्र सती मानती नहीं है तो इसका भाग्य इसको दुःखी करने के लिए ऐसे प्रेरित कर रहा है। अब क्या करें ?' तो बोले :

होइहि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा ॥

जब कोई मर जाता है तो बोलते हैं : 'भाई ! क्या करें ? ईश्वर की मर्जी...' 'ईश्वर की मर्जी' कह के उसको हाथ-पर-हाथ रखने की प्रेरणा नहीं देते बल्कि दुःख से बचाने के लिए 'ईश्वर की मर्जी' बोलते हैं ताकि ज्यादा दुःखी न हो, नियति है । कोई काम करने में कोरकसर नहीं रखो, फिर भी नहीं होता है तो भाई ! प्रारब्ध ऐसा है - ऐसा मानो ।

अब बोले : 'फिर भगवान की, ईश्वर की प्रार्थना क्यों करें ?'

जब भगवान की प्रार्थना करते हैं तो **मेटत कठिन कुअंक भाल के...** भाग्य के जो मंद और तीव्र कुअंक हैं उन्हें भगवान मिटा देते हैं परंतु तरतीव्र प्रारब्ध है तो भगवान का चिंतन और आश्रय लेने से शांति, सहनशक्ति व संतोष मिलता है। भगवान का आश्रय लेने से पता चलता है कि बीमारी शरीर को होती है, दुःख मन को होता है, राग-द्वेष बुद्धि को होता है और यह आत्मा अमर है, परमात्मा का अमृत-पुत्र है। कठिनाइयाँ सहने के बाद भी भगवान को पा लेता है । गरीबी में निगुरा आदमी जितना दुःखी, अशांत होता है उतना सत्संगी नहीं होता और अमीरी में निगुरा आदमी जितना अकड़ू, स्वार्थी होता है उतना सत्संगी नहीं होता।

शरीर दुःख की पोटली है । कोई-न-कोई दुःख होता ही है। **मन से अपना पुरुषार्थ करो, बुद्धि से कारण ढूँढ़ो और आखिर में भगवत्कृपा का आवाहन कर भगवत्शांति में, भगवद्ज्ञान में आ जाओ ।** जैसे जंगल में चारों ओर आग लगे तो पहले देखो कि आग कैसे बुझे ? नहीं बुझती है तो फिर सोचो कि आग से कैसे भागें ? अब नहीं भाग सकते तो वहीं कहीं सरोवर या नदी में खड़े हो जाओ। जैसे - जंगल में आग लगने पर वहाँ के प्राणी इधर-उधर पुरुषार्थ करके आखिर सरोवर में जा खड़े होते हैं। जो प्राणी पानी से डरते हैं वे भी आग लगती है तो सरोवर के पानी में खड़े हो जाते हैं।

अतः मन के स्तर पर प्रयत्न करो-पुरुषार्थ करो, बुद्धि के स्तर पर कारण खोजो और जब देखो कि इन दोनों में जरा लड़खड़ाहट हो रही है तो चित्त के स्तर पर आकर परमात्मा का चिंतन कर लो और मार दो छलाँग। पा लो सत्प्रेरणा और सुरक्षा ।

प्रश्नोत्तर

प्रश्न : 'कर्म में कुशलता लानी चाहिए' - ऐसा सब लोग कहते रहते हैं । 'गीता' में भगवान श्रीकृष्ण ने भी कर्म में कुशलता को योग की संज्ञा दी है परंतु बापूजी ! कर्म में कुशलता से तात्पर्य क्या है और इसे कैसे लाया जाय ?

पूज्यश्री : कर्म सुंदर हो, सहज हो, जल्दी हो, तत्परता से हो, सुचारु रूप से हो । कर्म करते समय आनंद आये, कर्म करते-करते थकान न लगे व अच्छे कार्य करने का कर्तापन (कर्तृत्व भाव) हृदय को स्पर्श न करे, यही कर्म में कुशलता है ।

'कुशान् लातीति कुशलः ।' पहले के जमाने में गुरु शिष्यों को कुशा (एक प्रकार की कँटीली घास) तोड़कर लाने के लिए बोलते थे । जो शिष्य सावधानी से कुशा तोड़कर ला देता था अर्थात् जिसके हाथ कुशा से कटे नहीं होते थे, उसे ही कुशल कहा जाता था ।

काजल की कोठरी में जायें और कालिमा न लगे, संसार में रहें और संसार का लेप न लगे यही तो कुशलता है ।

संत बालकरामजी का योग सामर्थ्य

• पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से

लाहौर (अब पाकिस्तान में) में एक बालक था। खाने, खेलने व पढ़ने में उसकी कोई रुचि नहीं थी। संसार की किसी भी चीज में उसकी आसक्ति नहीं थी। कारण कि प्रीतिपूर्वक रामनाम जपने से उसको अंदर का रस आने लगा था।

एक दिन घरवालों ने उसे डाँटा : ''मुफ्त का खाता है, कुछ करता नहीं, पढ़ता भी नहीं। भाग जा घर से नहीं तो खूब मारेंगे।'' और उसे घर से निकाल दिया।

पाँच-सात साल का बच्चा सह लेता है। बड़ी उम्र होने पर दुःख-सुख की चोट अधिक लगती है। वह लड़का जंगल में चला गया। वहाँ प्रीतिपूर्वक रामनाम का जप करने लगा। 'रा...म, रा...म' इस प्रकार रामनाम का दीर्घ उच्चारण करते-करते शांत हो जाता। थोड़ी देर तो परिश्रम पड़ा फिर आनंद आने लगा। शांति और माधुर्य में एक दिन बीता, दूसरा दिन बीता... और पाँचवाँ दिन भी बीत गया। उस प्रेमी भक्त के चित्त में विश्रांति आ गयी। जीभ तालु में लगा देता तो एक प्रकार का मधुमय रस जैसा टपकता था। अंदर का रस आने लगा तो बाहर की भूख-प्यास भूल गया।

सातवें दिन, उस विश्रांति पाये हुए प्रेमी भक्त के लिए भगवान ने एक लीला रची। गुर्राता हुआ एक बाघ आया। भक्त की आँखें तो खुलीं लेकिन दिल घबराया नहीं बल्कि सोचा 'बाघ शरीर को खायेगा। मैं तो शरीर नहीं हूँ। मेरा आत्मा अमर है। मैं राम का, राम मेरे। बाघ की गहराई में तू (राम) और मेरे हृदय में तेरी (राम) कृपा से ही धड़कनें चलती हैं। अगर तुझे इस शरीर को पूरा करना है, नया शरीर देना है तो तेरी मर्जी और जिलाना है तो तेरी मर्जी...।'

भगवान ने देखा कि इसने तो पूरा मेरे पर ही छोड़ दिया है। इतने में एक भील धनुष की टंकार करता हुआ आया। उसे देखकर बाघ भाग गया।
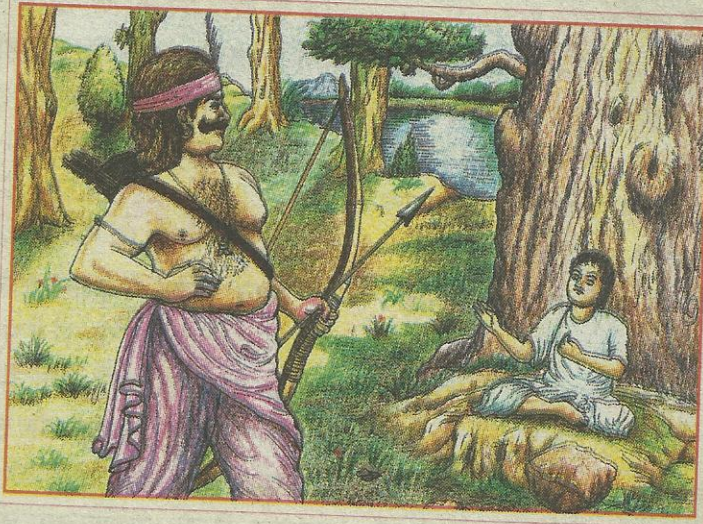
धनुषधारी बोला : ''अरे छोकरे ! अपने प्राण तुझे प्यारे नहीं हैं ? शेर, रीछ, बाघ और भालू से भरे जंगल में क्या कर रहा है ? चला जा। मैं आया तो बाघ भाग गया नहीं तो तू मर जाता।''

लड़का बोला : ''मेरा बाप (ईश्वर) बचानेवाला है, तभी तो आपको भेजा है।''

प्रेमी भक्त शिकारी में भी ईश्वरकृपा को देख लेता है। थोड़ी तू-तू, मैं-मैं हो गयी दोनों में। आखिर बालक ने कहा : ''भाई ! देखो, आपने बाघ को भगा दिया धन्यवाद ! अब आप अपने रास्ते जाओ। मुझे उपदेश की जरूरत नहीं है। जिसने मुझे प्रेरणा दी और सात दिन तक भूख-प्यास सहने की शक्ति दी वही मेरी रक्षा करेगा, नहीं तो उसकी मर्जी...।''

''अरे ! मौत आ जायेगी मौत !''

''भगवान के लिए मर जायेंगे तो मर जायेंगे। वैसे भी

तो मरेंगे। मैं भगवान के दर्शन करूँगा।''

वह पुनः 'रा...म, रा...म' इस प्रकार दीर्घ जप करने लगा। भील वेषधारी भगवान ने देखा कि यह तो पक्का है। उनसे रहा नहीं गया कि ऐसे प्यारे भक्तों को तो मैं खोजता हूँ। मैं तो छछिया भर छाछ पर नाचता हूँ। चला कैसे जाऊँ ?

प्रेमी भक्त तो बैठ गया प्रेमानंद में। भगवान ने अपना असली स्वरूप प्रकट किया, बोले : ''भक्त ! आँखें खोल, देख जिसका तू सुमिरन कर रहा है वह मैं आ गया हूँ।''

बालक बोला : ''नहीं, पहले अंदर भगवान दिखें, बाद में खोलूँगा।''

प्रेमी भी गजब के होते हैं। जब मुहब्बत जोर पकड़ती है तो शरारत का रूप लेती है। बालक ने कहा : ''ऐ शिकारी ! तू जहाँ से आया है वहाँ चला जा। यदि तू भगवान है तो मुझे परिचय दे दे। सचमुच में तू भगवान है तो गुरुजी ने जो भगवान का स्वरूप दिखाया है और मेरे मंदिर में जो भगवान हैं, ऐसे ही मेरे हृदय में वह कालिया, वह धनुषधारी, वह रमैया दिखना चाहिए फिर मैं आँखें खोलूँगा।''

जैसे बच्चे की मुहब्बत की बात माँ-बाप सुनते हैं, बुरा नहीं मानते ऐसे ही भगवान भी भक्त की अँगड़ाइयों का बुरा नहीं मानते। कैसे हैं भगवान ! कैसे प्यारे हैं !

भगवान ने संकल्प किया तो मंदिर के ठाकुरजी जैसा रूप अंदर (हृदय में) प्रकट हुआ, फिर बालक ने बाहर देखा और प्रणाम किया।

''बालक तेरा नाम क्या है ?''

''प्रभु ! आप जो रख दो।''

''बालकराम... ! बेटा ! वरदान माँग लो।''

बालक बोला : ''खाने-पीने के बदले उलाहने सुनने पड़ते हैं। आप ऐसा आशीर्वाद दो कि पत्थर पर हाथ रखूँ तथा बोलूँ कि यह सोना हो जाय तो सोना हो जाना चाहिए और तुम्हारी प्रीति मिले।''

भगवान बोले : ''अच्छा, हो जायेगा।''

बहुत छोटी चीज माँग ली। बचकानी बुद्धि थी। ब्रह्मवेत्ता महापुरुष की दीक्षा नहीं मिली हुई थी। तत्त्वज्ञान का सत्संग नहीं सुना था।

अब उसको चाबी मिल गयी थी मन एकाग्र करने की, संकल्प सिद्ध करने की। थोड़े पत्थर इकट्ठे करके 'रा...म' कह के उन पर हाथ रखा तो सोने के हो गये। देखें होता है कि नहीं, ऐसा नहीं किया। भगवान ने बोला है तो होगा ही - ऐसा दृढ़ संकल्प होना चाहिए। उसकी साधना से संकल्पसिद्धि आ गयी थी। जो कष्ट सहते हुए अपना कर्तव्य पालता है, उसका संकल्प-बल बढ़ जाता है।

अब वह सोना बनाने लगा। एक बड़ा-सा मठ-मंदिर बनवाया। उसमें अध्ययन, अध्यापन और सदाव्रत की व्यवस्था की गयी। चौबीसों घंटे भोजनालय चालू रहता। कोई भी आये तो - 'खाओ और राम-राम जपो।' कोई भी गरीब-गुरबा आता तो रुपये-पैसे, कपड़े, कम्बल आदि प्राप्त करता।

लाहौर में उनका मठ सुविख्यात हो गया। भीड़-भाड़ बढ़ गयी तो सब कुछ छोड़कर, मठ चलानेवाले लोगों को अर्पण कर खुद एक कम्बल व करमंडल उठाया, बोले : ''हम जायेंगे।'' और वे जगन्नाथपुरी के लिए चल पड़े। (अभी भी बालकरामजी का मठ गूँटी चौक, जगन्नाथपुरी में है।)

'ऐसे गुरुजी जा रहे हैं तो हम कैसे रहेंगे ? हम भी चलेंगे।' यह सोचकर उनके कई अनुयायी उनके साथ निकल पड़े। जहाँ शाम होती वहाँ आरती-पूजा करते, शंख व नगाड़े बजाते। एक बार उन्होंने दिल्ली के बादशाह औरंगजेब के महल के पास ही डेरा डाला।

बादशाह बोला : ''नगाड़े क्यों बज रहे हैं ?''

सिपाही : ''एक साधु हैं, वे आरती-पूजा करते हैं तो उनके शिष्य नगाड़े बजाते हैं।''

''उनको बोल दो यह बंद कर देवें।''

सिपाही ने बालकरामजी के पास जाकर कहा :

''बादशाह का आदेश है - नगाड़े नहीं बजेंगे।''

बालकरामजी ने कहा : ''वह अपनी शहनाइयाँ बजवाता है तो शोरगुल नहीं होता ? आरती-पूजा के समय हमारे राज्य में नगाड़े नहीं बजेंगे तो तुम्हारे बादशाह के राज्य में उसकी शहनाइयाँ और वाद्ययंत्र कुछ नहीं बजेंगे।''

जो कष्ट सहता है, तपस्या करता है, जिसमें समता व आत्मबल है उसमें सिद्धियाँ आती हैं। अब बादशाह के स्वागत की शहनाइयाँ बजानेवाले उन्हें फूँकते जायें-फूँकते जायें, आवाज निकले ही नहीं। औरंगजेब कोई कच्चा अहंकारी नहीं था कि 'चलो, नम्र हो जायें, माफी माँग लें।' उसने कहा : ''उस साधु को जेल में डाल दो।''

सिपाही बालकरामजी को जेल में डालने के लिए आये तो उनके शिष्य मरने-मिटने पर उतारू हो गये। बालकरामजी शिष्यों से बोले : ''नहीं, तुम लोग यहाँ भजन करो।''

जेल में खाना दें तो बालकरामजी खायें नहीं। श्वास अंदर जाय तो 'रा' बाहर आये तो 'म' इस प्रकार जप करते रहे। तीन दिन तक कुछ नहीं खाया-पीया। उनके हँसते हुए मुखमंडल, मधुर संभाषण और भगवान के नाम-जप में कोई फर्क नहीं पड़ा। उन्हें देखनेवाले जेल के सिपाही, कैदी, जेलर सब दंग रह गये।

एक सिपाही ने औरंगजेब से कहा : ''महाराज बोलते हैं हमको जगन्नाथपुरी जाना है। हमारा कोई अपराध नहीं है, हमें क्यों बंद किया है ? हमें खुला कर दो। हमको तंग किया तो परिणाम ठीक नहीं होगा।''

संत को सताना अपनी तबाही को बुलाना है। औरंगजेब साधारण अहंकारी होता तो मान लेता। बोला : ''वह अकेला क्या कर लेगा पूरे शासन का ? एक व्यक्ति पूरे राज्य को चेतावनी देता है !''

बालकरामजी ने सोचा कि यह चमत्कार के बिना नहीं मानेगा। योगी लोग योग की धारणा से पृथ्वी तत्त्व, जल तत्त्व, तेज तत्त्व, वायु तत्त्व और आकाश तत्त्व को सिद्ध करते हैं किंतु भगवान के भक्त के जीवन में भक्ति से ये सिद्धियाँ आ जाती हैं।

बालकरामजी ने संकल्प किया, योग-सामर्थ्य का आवाहन किया और अपने शरीर से पानी की धारा निकाली। संकल्प के प्रभाव से वह धारा चली... चली... सबको ऐसा एहसास हुआ कि राजदरबार में पानी-पानी हो गया। राजदरबार डूबने लगा। जैसे याज्ञवल्क्यजी ने अपने योगबल से अग्नि तत्त्व की धारणा करके सबको जनकपुरी जलती हुई दिखा दी, ऐसे ही उन्होंने जल तत्त्व की धारणा करके राजदरबार डूबने की स्थिति ला दी।

किसीने औरंगजेब को समझाया कि फकीरों से टक्कर लेना ठीक नहीं है। अपनेको माफी माँगनी चाहिए। औरंगजेब ने आकर बालकरामजी को माथा टेका और अशर्फियाँ भेंट कीं।

बालकरामजी बोले : ''मुझे अशर्फियों की जरूरत नहीं। तुम तो प्रजा को नोचकर कर (टैक्स) लेते हो, हम तो ऐसे ही भगवान से ले लेते हैं।''

औरंगजेब ने कहा : ''एक दिन के लिए हमारे शाही राजमहल को पावन करो। वहीं प्रसाद बनाओ।''

(आगे क्या हुआ, पढ़ें अगले अंक में)

प्रेम के योग्य एकमात्र प्रभु

चिंतन करने योग्य एकमात्र प्रभु हैं क्योंकि जो सदा हैं, सब जगह हैं और स्वयंप्रकाश हैं, वे ही चित्त द्वारा प्राप्त हो सकते हैं । शरीर या भोग्यपदार्थ एवं संसार चिंतन करने योग्य नहीं हैं क्योंकि जो सदा, सब जगह नहीं हैं, **जो अनित्य और जड़ हैं, उनकी प्राप्ति चिंतन से नहीं होती । अतः उनका चिंतन करना व्यर्थ है ।** भगवान का चिंतन ही सार्थक चिंतन है । अतएव साधक को निरंतर प्रभु का ही चिंतन करना चाहिए । प्रभु का चिंतन करने के लिए उन पर विश्वास करना और उनको अपना मानना आवश्यक है ।

जो वास्तव में अपने नहीं हैं, जिनको मनुष्य भूल से अपना मानता है, जिस माने हुए संबंध का विच्छेद अवश्य होनेवाला है, उन अनित्य, क्षणभंगुर पदार्थों को जब तक साधक नित्य और अपना मानता रहता है, तब तक वह अपने सच्चे, नित्य संबंधी परम प्रेमास्पद प्रभु को पूर्णरूप से अपना नहीं मान पाता । इसलिए साधक को चाहिए कि उसका जो शरीर तथा संसार में 'मैं' पन और अपनापन भूल से माना हुआ है, उसका सर्वतोभाव से परित्याग कर दे । ऐसा करने से उसका अपने नित्य सखा, स्वभाव से ही सुहृद प्रभु में अपनापन स्वतः हो जायेगा । जो भाव त्याग से प्राप्त होता है, उसे प्राप्त करने में मनुष्य सदैव स्वतंत्र है क्योंकि त्याग करने में कोई भी पराधीन नहीं है ।

योग, बोध और प्रेम किसी क्रिया का फल नहीं है । इनका संबंध साधक की चित्तशुद्धि से है । चित्त शुद्ध होने पर योगी को योग, विचारशील को बोध और प्रेमी को प्रेम स्वतः प्राप्त होता है । चित्त की शुद्धि उन महापुरुषों के सत्संग से होती है, जिनका भाव शुद्ध हो गया है । अतः साधक को चाहिए कि सत्पुरुषों का संग प्राप्त करके अपने साधन का निर्माण करे और उनके आज्ञानुसार तत्परता से साधन में लग जाय । अपने प्राणों से भी साधन का महत्त्व अधिक समझे ।

सत्पुरुषों का संग मिलने में प्रारब्ध को हेतु नहीं मानना चाहिए । सत्पुरुषों का संग भगवान की अहैतुकी कृपा से मिलता है एवं हरेक परिस्थिति में प्रभु की कृपा का दर्शन करने से और उसका आदर करने से भगवान की कृपा फलीभूत होती है। अतएव साधक को भगवान की कृपा पर विश्वास करके प्राप्त शक्ति और परिस्थिति के अनुसार सत्पुरुषों के संग की प्राप्ति के लिए सच्ची अभिलाषा के साथ चेष्टा करते रहना चाहिए । ऐसा करने से उसे सत्संग की प्राप्ति अवश्य हो जाती है । इसमें कोई संदेह नहीं है ।

अशुभ संकल्पों के त्याग से शुभ संकल्पों की पूर्ति स्वतः होने लगती है । उससे उत्कृष्ट भोगों की प्राप्ति हो जाती है पर जो साधक अपनेको शुभ संकल्पों की पूर्ति के सुख में आबद्ध नहीं करते, उन्हें सब संकल्पों की निवृत्ति द्वारा योग के रस की प्राप्ति होती है । जो साधक योग के रस में भी आबद्ध नहीं होते, उन्हें विवेकपूर्वक सद्गति अर्थात् मोक्ष प्राप्त होता है पर जो साधक मोक्ष की भी उपेक्षा कर देता है, उसे परम प्रेम की प्राप्ति होती है। जो वास्तव में पाँचवाँ पुरुषार्थ है, जिसके प्रभाव से पूर्ण ब्रह्म, सच्चिदानंदघन अपनी महिमा में नित्य ज्यों-का-त्यों स्थित रहता हुआ ही जीवभाव को स्वीकार करता है। सम्पूर्ण संसार जिसके एक अंश में है, वह अनंत ब्रह्म प्रेमियों की गोद में खेलता है ।

भक्त चरित्र

महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

(गतांक से आगे)

जिस राजा की अधिकृत भूमि में लँगड़े-लूले, अंधे, अपाहिज और भाँति-भाँति के पीड़ित रोगियों के भरण-पोषण एवं औषधादि के लिए सुचारुरूप से प्रबन्ध न हो, उस राजा को चिन्ता करनी चाहिए।

जिस राजा के शासन के भय से चारों वर्ण और चारों आश्रमों का धर्म यथावत् पालन न होता हो तथा वर्णविप्लव अथवा आश्रमविप्लव उपस्थित हो, उस राजा को चिन्ता करनी चाहिए।

जिस राजा के राज्य में महर्षिगण अधिकारानुसार बालकों को अपने-अपने आश्रमों में शिक्षा न दे पाते हों और यज्ञानुष्ठान आदि करने में कठिनाई अथवा बाधाएँ उपस्थित होती हों, उस राजा को चिन्ता करनी चाहिए।

परम भागवत प्रह्लाद ! जिस राजा के राज्य में बालकों में नास्तिकता के भाव जग रहे हों और उनके शिक्षकों का उनके ऊपर प्रभाव न हो, उस राजा को चिन्ता करनी चाहिए तथा जिस राजा के हृदय में सर्वव्यापी परमात्मा के ऊपर विश्वास न हो परंतु जो स्वयं अपने पुरुषार्थ पर भरोसा करता हुआ, अपनी त्रुटि देखे, उसको ही चिन्ता करनी चाहिए। हम नहीं जानते कि तुमको इन बातों में से किस बात की चिन्ता है ?''

प्रह्लाद : ''ऋषिराज ! आपने प्रश्न के रूप में मुझे जो उपदेश दिया है उसके लिए मैं आपके चरणों में बारम्बार प्रणाम करता हूँ। भगवन् ! आपके उस समय के उपदेश ने, जबकि मैं गर्भ में था, मुझे घोर संकटरूपी समुद्र में दृढ़ नौका का काम दिया था और उन्हीं उपदेशों के फल से मेरा यह नारकीय ज़ीवन स्वर्ग ही नहीं, परम पद के सुख का अनुभव कर रहा है किंतु राजकाज के मायाजाल में पड़, भगवान की मायावश उस उपदेश का कुछ विस्मरण सा हो रहा था।

अतएव मैंने अपने पुत्रों के आसुरी भावों को मिटाने में अपने पुरुषार्थ का आश्रय लिया और उसमें असफलता देख मेरे हृदय में चिन्ता उत्पन्न हुई थी किंतु आज आपके पुनः स्मरण दिलाने से और उपदेश के दोहराने से मेरा भ्रम दूर हो गया व मेरी सारी चिन्ता अपने-आप विलीन हो गयी। इसलिए नाथ ! आपकी इस अहैतुकी कृपा के लिए मैं बारम्बार आपके चरणों में साष्टांग प्रणाम करता हूँ। अब मुझे कोई चिन्ता नहीं है।''

नारदजी के सत्संग से दैत्यर्षि प्रह्लाद की चिन्ता दूर हुई, तदनन्तर महर्षि नारदजी ने राजसभा से जाने की इच्छा प्रकट की। प्रह्लाद ने अपनी महारानी और पुत्रों के सहित उनके चरणों में प्रणाम किया तथा उनको विदा किया।

महर्षि शुक्राचार्यजी परिभ्रमण करने के बड़े प्रेमी थे। वे बहुधा चारों ओर घूमा ही करते थे। तीर्थयात्रा से लौटे उनको अधिक दिन बीत गये थे। अतएव एक जगह बहुत दिनों तक रहने से उनका जी उकता रहा था। उनका विचार फिर तीर्थयात्रा करने का था और इस बार वे सम्राट प्रह्लाद के साथ तीर्थयात्रा करना चाहते थे। एक दिन राजसभा में प्रह्लादजी बैठे हुए थे। सहसा महर्षि शुक्राचार्यजी वहाँ आ पहुँचे। प्रह्लाद ने उनको आते देख राजसिंहासन से उतर साष्टांग प्रणाम किया और एक ऊँचे आसन पर बैठाया। तदनंतर उनका सविधि पूजन कर हाथ जोड़कर कहा : ''भगवन् ! क्या आज्ञा है ?''

शुक्राचार्य : ''वत्स दैत्यर्षि ! भगवत्कृपा से इस समय तुम सर्वसुख सम्पन्न हो, दूध-पूत से भरे पूरे हो और तुम्हारे धार्मिक विचारों से सारा साम्राज्य सुख-समृद्धि पूर्ण हो रहा है।

(क्रमशः)
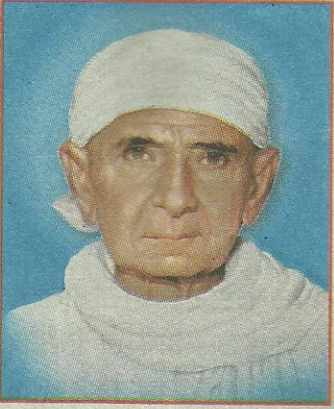
जननी जने तो भक्तजन या दाता या शूर ।

● ब्रह्मलीन स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज के अमृतवचन

(गतांक से आगे)

मैं सोचता हूँ कि भारत के वीरों को यह क्या हो गया है ? ऐसे कार्यहीन व निष्क्रिय क्यों हो गये हैं ? ऐसे डरपोक क्यों हो गये हैं ? क्या हिमालय के पहाड़ी वातावरण में पहले जैसा प्रभाव नहीं रहा ? क्या भारत की मिट्टी में वह प्रभाव नहीं रहा कि वह उत्तम अन्न पैदा कर सके, स्वादिष्ट-सुन्दर फल-फूल पैदा कर सके ? क्या गंगा मैया ने अपने जल में से अमृत खींच लिया है ? नहीं, यह सब तो पूर्ववत् ही है । तो फिर किस कारण हमारी शक्ति व शूरवीरता नष्ट हो गयी है ? भीम व अर्जुन जैसी विभूतियाँ हम क्यों पैदा नहीं कर पाते ?

मैं मानता हूँ कि हमारे में शक्ति, शौर्य, आरोग्य व बहादुरी सब कुछ विद्यमान है परंतु कुदरत के नियमों पर हम अमल नहीं कर रहे हैं । इसके विपरीत हम कुदरत के नियमों का उल्लंघन कर रहे हैं व प्रतिपल भोग-विलास तथा शरीर के बाह्य दिखावे को सजाने में मग्न रहते हैं और अपने आरोग्य के विषय में तो जरा भी सोचते नहीं हैं।

संभोग प्रजोत्पत्ति का कार्य है । तो कैसी प्रजा उत्पन्न करोगे ? एक कवि ने कहा है :

जननी जने तो भक्तजन या दाता या शूर ।
नहीं तो रहना बाँझ ही, मत गँवाना नूर ॥

आज के जमाने में संभोग को भोग-विलास का एक साधन ही मान लिया गया है । जिन लोगों ने इस पवित्र कार्य को मौज-मजा व भोग-विलास का साधन बना रखा है, वे लोग स्वयं को मनुष्य कहलाने के लायक भी नहीं रहे । संयमी जीवन से ही दुनिया में महापुरुष, महात्मा, योगीजन, संतजन, पैगम्बर व मुनिजन उन्नति के शिखर पर पहुँच सके हैं । भोले-भटके हुए लोगों को उन्होंने अपनी पवित्र वाणी व प्रवचनों से सत्य का मार्ग दिखाया है । उनकी कृपा व आशीर्वाद से अनेक लोगों के हृदय कुदरती प्रकाश से प्रकाशित हुए हैं।

मनुष्यों को प्राकृतिक कानूनी सिद्धांतों पर अमल करके, उनका अनुकरण करके समान दृष्टि से अपनी जिंदगी व्यतीत करनी चाहिए । मन सदा पवित्र रखना चाहिए, जिससे दिल भी सदा पवित्र रहे । अंतःकरण को शुद्ध रखकर कार्य में चित्त लगाना चाहिए, जिससे कार्य में सफलता मिले । संभोग के समय भी विचार पवित्र होंगे तो पवित्र विचारोंवाली प्रजा जन्म लेगी और वह हमारे सुख में वृद्धि करेगी।

यदि आप दुनिया में सुख-शांति चाहते हो तो अंतःकरण को पवित्र व शुद्ध रखें । जो मनुष्य वीर्य की रक्षा कर सकेगा वही सुख व आराम का जीवन बिता सकेगा और दुनिया में उन्हीं लोगों का नाम सूर्य के प्रकाश की नाईं चमकेगा।

'महाभारत' का प्रसंग है : एक बार इन्द्रदेव ने अर्जुन को स्वर्ग में आने के लिए आमंत्रण दिया और अर्जुन ने वह स्वीकार किया । इन्द्रदेव ने अर्जुन का अपने पुत्र के समान अत्यंत सम्मान व खूब प्रेम से सत्कार किया । अर्जुन को आनंद हो ऐसी सब चीजें वहाँ उपस्थित रखीं । उसे रणसंग्राम की समस्त विद्या सिखाकर अत्यधिक कुशल बनाया । थोड़े समय बाद परीक्षा लेने के लिए अथवा उसे प्रसन्न रखने के लिए राजदरबार में स्वर्ग की अप्सराओं को बुलाया गया।

इन्द्रदेव ने सोचा कि अर्जुन उर्वशी को देखकर मस्त हो जायेगा और उसकी माँग करेगा परंतु अर्जुन पर उसका कोई प्रभाव न हुआ । इसके विपरीत उर्वशी अर्जुन की शक्ति, गुणों व सुन्दरता पर मोहित हो गयी।

इन्द्रदेव की अनुमति से उर्वशी रात्रि में अर्जुन के महल में गयी एवं अपने दिल की बात कहने लगी : ''हे

नौ योगीश्वरों के उपदेश

(गतांक से आगे)

खो बैठते हैं। जब कामदेव, वसन्त आदि देवताओं ने इस प्रकार स्तुति की, तब सर्वशक्तिमान भगवान ने अपने योगबल से उनके सामने बहुत-सी ऐसी रमणियाँ प्रकट करके दिखलायीं, जो अद्‌भुत रूप-लावण्य से सम्पन्न और विचित्र वस्त्रालंकारों से सुसज्जित थीं तथा भगवान की सेवा कर रही थीं। जब देवराज इन्द्र के अनुचरों ने उन लक्ष्मीजी के समान रूपवती स्त्रियों को देखा, तब उनके महान सौन्दर्य के सामने उनका चेहरा फीका पड़ गया, वे श्रीहीन होकर उनके शरीर से निकलनेवाली दिव्य सुगंध से मोहित हो गये। अब उनका सिर झुक गया। देवदेवेश भगवान नारायण हँसते हुए से उनसे बोले : ''तुम लोग इनमें से किसी एक स्त्री को, जो तुम्हारे अनुरूप हो, ग्रहण कर लो। वह तुम्हारे स्वर्गलोक की शोभा बढ़ानेवाली होगी। देवराज इन्द्र के अनुचरों ने 'जो आज्ञा' कहकर भगवान के आदेश को स्वीकार किया तथा उन्हें नमस्कार किया । फिर उनके द्वारा बनायी हुई स्त्रियों में से श्रेष्ठ अप्सरा उर्वशी को आगे करके वे स्वर्गलोक में गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने इन्द्र को नमस्कार किया तथा भरी सभा में देवताओं के सामने भगवान नर-नारायण के बल और प्रभाव का वर्णन किया। उसे सुनकर देवराज इन्द्र अत्यन्त भयभीत व चकित हो गये।

भगवान विष्णु ने अपने स्वरूप में एकरस स्थित रहते हुए भी सम्पूर्ण जगत के कल्याण के लिए बहुत-से कलावतार ग्रहण किये हैं। विदेहराज ! हंस, दत्तात्रेय, सनक-सनन्दन-सनातन-सनत्कुमार और हमारे पिता ऋषभ के रूप में अवतीर्ण होकर उन्होंने आत्मसाक्षात्कार के साधनों का उपदेश किया है। उन्होंने ही हयग्रीव अवतार लेकर मधु-कैटभ नामक असुरों का संहार करके उन लोगों के द्वारा चुराये हुए वेदों का उद्धार किया है। प्रलय के समय मत्स्यावतार लेकर उन्होंने भावी मनु सत्यव्रत, पृथ्वी, औषधियों व धान्यादि की रक्षा की और वराहावतार ग्रहण करके पृथ्वी का रसातल से उद्धार करते समय हिरण्याक्ष का संहार किया। कूर्मावतार ग्रहण करके उन्हीं भगवान ने अमृत-मन्थन का कार्य सम्पन्न करने के लिए अपनी पीठ पर मन्दराचल धारण किया और उन्हीं भगवान विष्णु ने अपने शरणागत एवं आर्त्त भक्त गजेन्द्र को ग्राह से छुड़ाया।

एक बार वालखिल्य ऋषि (जिनका कद अँगूठे जितना था) तपस्या करते-करते अत्यन्त दुर्बल हो गये थे। वे जब कश्यप ऋषि के लिए समिधा ला रहे थे तो थककर गाय के खुर से बने हुए गड्ढे में गिर पड़े, मानो समुद्र में गिर गये हों। उन्होंने जब स्तुति की, तब भगवान ने अवतार लेकर उनका उद्धार किया। वृत्रासुर को मारने के कारण जब इन्द्र को ब्रह्महत्या लगी और वे उसके भय से भागकर छिप गये, तब भगवान ने उस हत्या से इन्द्र की रक्षा की और जब असुरों ने अनाथ देवांगनाओं को बंदी बना लिया, तब भी भगवान ने ही उन्हें असुरों के चंगुल से छुड़ाया। जब हिरण्यकशिपु के कारण प्रह्लाद आदि संतपुरुषों को भय पहुँचने लगा, तब उनको निर्भय करने के लिए भगवान ने नृसिंहावतार ग्रहण किया और हिरण्यकशिपु को मार डाला। **(क्रमशः)**

अर्जुन ! मैं आपको चाहती हूँ। आपके सिवा अन्य किसी पुरुष को मैं नहीं चाहती। केवल आप ही मेरी आँखों के तारे हो। अरे, मेरी सुन्दरता के चन्द्र ! मेरी अभिलाषा पूर्ण करो। मेरा यौवन आपको पाने के लिए तड़प रहा है।''

यदि आजकल के सौन्दर्य के पुजारी नवयुवक अर्जुन की जगह होते तो इस प्रसंग को अच्छा अवसर समझ के फिसलकर उर्वशी के अधीन हो जाते परंतु परमात्मा श्रीकृष्ण के परम भक्त अर्जुन ने उसे क्या उत्तर दिया इसे जानने के लिए प्रतीक्षा कीजिये अगले अंक की। **(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'निरोगता का साधन' से क्रमशः)**

ईशान-स्थल की महत्ता

कमरे की पूर्वी दीवाल की लम्बाई का एक तिहाई भाग व उत्तरी दीवाल की लम्बाई का एक तिहाई भाग लेकर जो आयताकार स्थल बनता है, वह 'ईशान-स्थल' कहलाता है (चित्र देखें)। 12 x 18 के कमरे का ईशान-स्थल 4 x 6 का होगा। खुले भूमिखंड के विषय में भी ऐसे ही समझना चाहिए।
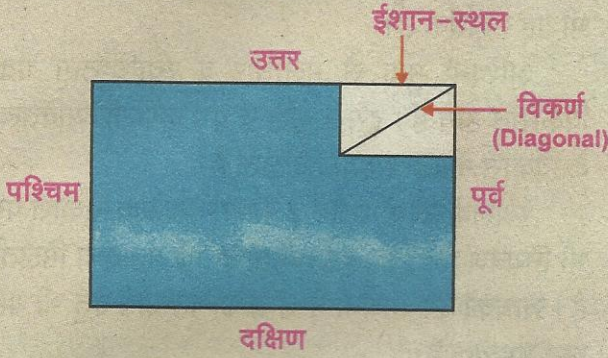
इस स्थल में तप-साधना की मूर्ति भगवान शिव का वास होता है, इसलिए यह साधना करने के लिए सर्वोत्तम स्थल है । सुख-शांति और कल्याण चाहनेवाले बुद्धिमानों को अपने घर, दुकान या कार्यालय में ईशान-स्थल पर अपने इष्टदेव का, सद्गुरु का चित्र लगाकर वहाँ धूप-दीप, मंत्रोच्चार तथा साधना-ध्यान पूर्व अथवा उत्तर की ओर मुख रखकर करना चाहिए। इसका फल उन्हें विशेष सुख-शांति के रूप में मिलता है।

प्रत्येक कमरे के ईशान-स्थल में भारी (वजनदार) वस्तुएँ नहीं रखनी चाहिए । इसी प्रकार भूमिखंड के संदर्भ में ईशान तथा पूर्व एवं उत्तर दिशा में खाली भाग अधिक होना चाहिए और इस भाग में अपेक्षाकृत वजन में हलके व कम ऊँचाईवाले पेड़-पौधे लगाने चाहिए । भूमिखंड के ईशान-स्थल में तुलसी, बिल्व, आँवला लगाना सुख-समृद्धिकारक है। ईशान-स्थल में पीने का पानी रखना तथा भूमिगत पानी की टंकी या ट्यूबवेल का होना विशेष लाभदायक है परंतु इस बात का ध्यान रहे कि ईशान कोण से निकलनेवाली सीधी रेखा (विकर्ण या डायगनल) पर टंकी, ट्यूबवेल या कुआँ न हो । (चित्र देखें) छत के ऊपर की टंकी (ओवर हेड टैंक) इस स्थल पर वर्जित है। इसे मध्य पश्चिम क्षेत्र में रखना लाभदायक है ।

विद्यार्थियों के लिए भी ईशान कोण बड़े महत्त्व का है। पूर्व एवं उत्तर दिशाएँ ज्ञानवर्धक दिशाएँ तथा ईशान-स्थल ज्ञानवर्धक स्थल है। जो विद्यार्थी ईशान-स्थल पर बैठकर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके पढ़ता है उसे ज्ञानार्जन में विशेष सहायता मिलती है। पूर्व की ओर मुख करने से विशेष लाभ होता है।

अध्ययन कक्ष में सद्गुरु तथा महापुरुषों के चित्र लगाने चाहिए, इससे सत्प्रेरणा मिलती है।

ईशान-स्थल में जूते-चप्पल, कचरा एवं फालतू वस्तुएँ नहीं रखनी चाहिए । इस स्थान पर संडास व रसोई होना अत्यंत हानिकारक है । इस स्थान को स्वच्छ-पवित्र रखना चाहिए एवं टी.वी., रेडियो, टेलिफोन आदि उपकरण इस स्थल में नहीं रखने चाहिए।

फर्श व छत की ढलान ईशान-स्थल की ओर होना विशेष लाभदायक है । इसी प्रकार पूरे भूमिखंड में भी ईशान-स्थल नीचा होना चाहिए।

सुख-शांति तथा साधना में अभिवृद्धिकारक ईशान-स्थल का सभीको लाभ उठाना चाहिए।

सदा स्मरण रहे कि इधर-उधर भटकती वृत्तियों के साथ तुम्हारी शक्ति भी बिखरती रहती है । अतः वृत्तियों को बहकाओ नहीं। तमाम वृत्तियों को एकत्रित करके साधनाकाल में आत्मचिंतन में लगाओ और व्यवहारकाल में जो कार्य करते हो उसमें लगाओ ।

- आश्रम की पुस्तक 'जीवन रसायन' से

पेट के दोष, बहुत सारे रोग मिटाये और पाचन सबल बनाये- त्रिदोषनाशक स्थलबस्ति

भूमि पर कंबल बिछाकर शवासन में लेट जायें, फिर गुदा को सिकोड़ें तथा फैलायें ।

'घेरंड संहिता' की कुछ टीकाओं के अनुसार स्थलबस्ति में पादपश्चिमोत्तानासन की स्थिति में अश्विनी मुद्रा की जाती है । यह प्रयोग भी बहुत सरल है। इसमें पैरों को फैलाकर उनके बीच १२ इंच का अंतर रखें । आगे उतना ही झुकें जितने में आप अपने पैरों की उँगलियों को पकड़ सकें। इस स्थिति में अश्विनी मुद्रा का अभ्यास करें।

श्वासक्रिया : श्वास लेते समय गुदाद्वार का आकुंचन अर्थात् ऊपर की ओर खींचा जाता है और श्वास छोड़ते समय प्रसरण किया जाता है।

लाभ : स्थलबस्ति के अभ्यास से पेट के दोष, आम व वात जन्य रोगों का शमन और जठराग्नि का वर्धन होता है । इससे पित्त तथा कफ के दोषों का नाश होता है और पेट निरोग बनता है। यह सभी प्रकार के रोगों से रक्षा करती है। व्याधि उत्पन्न होने पर उसे जड़ से हटाने में भी यह सहायक है।

अश्विनी मुद्रा से मूलाधार व स्वाधिष्ठान चक्र विकसित होते हैं। इससे बुद्धि व प्रभावशाली व्यक्तित्व के विकास में बड़ा सहयोग मिलता है।

स्थलबस्ति से शरीर के साथ मानसिक विकारों पर भी नियंत्रण होता है। ब्रह्मचर्य पालन में सहायता मिलती है। साधकों को साधना में शीघ्र उन्नत होने हेतु भी यह खूब सहायक है।

सावधानी : उच्च रक्तचाप, हर्निया व पेट के गंभीर रोगों में यह प्रयोग वर्जित है।

*

एक्यूप्रेशर के दो उपयोगी बिन्दु

सूर्यबिन्दु :

सूर्यबिन्दु छाती के पर्दे (डायफ्राम) के नीचे आये हुए समस्त अवयवों का संचालन करता है। नाभि खिसक जाने पर अथवा डायफ्राम के नीचे के किसी भी अवयव के ठीक से कार्य न करने पर सूर्यबिन्दु पर दबाव डाला जाना चाहिए।

शक्तिबिन्दु :

जब बहुत थकान हो या रात्रि को नींद न आयी हो तब इस बिन्दु को दबाने से वहाँ दुखेगा। उस समय वहाँ दबाव डालकर उपचार करें।
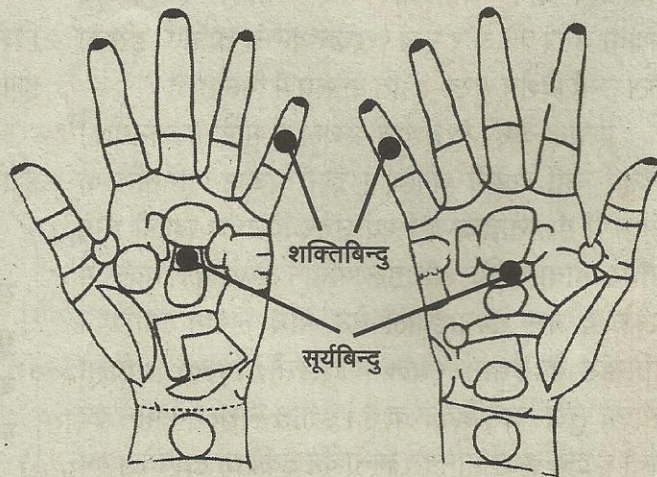
पाठशाला और कॉलेज में प्रथम स्थान

मैंने पूज्य बापूजी से दिसम्बर २००२ में उल्हासनगर (महा.) में सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली। तब मैं ९वीं कक्षा में था। हर रोज नहाने के बाद मैं नियम से मंत्रजप करता हूँ। मैंने दसवीं की बोर्ड की परीक्षा में ८८.८०% अंक प्राप्त कर अपने स्कूल में प्रथम स्थान प्राप्त किया। बारहवीं कक्षा में मुझे इंजीनियरिंग के पी.सी.एम. ग्रुप में ९८.३७% अंक प्राप्त हुए। यह सब पूज्य बापूजी से प्राप्त सारस्वत्य मंत्रदीक्षा व उनकी कृपा का ही परिणाम है।

– भूषण जग्या
उल्हासनगर-१ (महा.)।

जीवनदान मिला

मैं १२-१३ वर्ष की थी, तब पैर में चोट लग जाने के कारण बिल्कुल चल नहीं पाती थी और रोती रहती थी। बहुत इलाज कराया पर ठीक नहीं हुआ। एक दिन मेरी माताजी ने कहा : ''बेटी ! तू बड़दादा से प्रार्थना कर, ठीक हो जायेगी।''
मैंने करोलबाग आश्रम में माताजी की मदद से ७ परिक्रमा की और कातरभाव से प्रार्थना की। बड़दादा की मिट्टी लगायी तथा जल पीया- ऐसा करते ही मेरा दर्द गायब हो गया। मैंने यह घटना अपने पिताजी को बतायी तो उनको विश्वास नहीं हुआ पर जब मैंने उन्हें चलकर, दौड़कर दिखाया तो पूज्य बापूजी में उनकी श्रद्धा अथाह बढ़ गयी।

एक बार 'होली फैमिली होस्पिटल' में बताया गया कि मुझे सिस्ट (Ovarian Cyst) है, जिससे मैं काफी परेशान थी। लेजर ऑपरेशन से ओवेरियन सिस्ट पंक्चर करने के लिए मुझे अस्पताल में दाखिल किया गया परंतु बुखार न उतरने के कारण ऑपरेशन रोक दिया गया। मेरी माताजी ने 'श्री आसारामायण' के पाठ का संकल्प किया तथा बड़दादा की मिट्टी लगायी। दोबारा C.T.Scan हुआ तो सिस्ट गायब ! सभी डॉक्टर हैरान हो गये कि यह कैसे संभव हुआ !

मेरे गुरुदेव ने मुझे नया जीवनदान दिया है।

'जो न करे राम वो करे साँईं आसाराम।'

– रिंकी गुप्ता, नई दिल्ली।

गुरु की महिमा गाते हुए संत एकनाथजी महाराज कहते हैं :

गुरु करुणेचा सिंधू। पूर्ण कृपेचा आनंदू।
गुरुस्वरूपाचे स्मरण। मनीं आत्म्याचे चिंतन॥
अंतरंगी गुरुमूर्ती। हृदयात देखिली। ज्ञानदृष्टि देखतांचि। बाह्यदृष्टि हरपली॥

भावार्थ : सद्गुरु करुणा के, पूर्ण कृपा के, परमानंद के सागर हैं। इसलिए मन में गुरु के स्वरूप का सुमिरन करना चाहिए, आत्मा का चिंतन करना चाहिए। हृदय के अंतरप्रदेश में गुरुदेव की मूर्ति का ध्यान धरने से ज्ञानदृष्टि प्राप्त हुई और उससे जगत की ओर देखने पर बाह्यदृष्टि अर्थात् भेददृष्टि का सर्वथा अभाव हो गया (सर्वत्र अद्वैत सत्ता ही भासने लगी)।

श्रीखंड्या का रूप लेकर वैकुंठपति भगवान विट्ठल (श्रीहरि) संत एकनाथजी के घर सेवा-चाकरी करते थे, उस संदर्भ में :

गुरू परमात्मा परेशु ऐसा ज्यांचा दृढ विश्वासु। देव तयांचा अंकिला स्वये संचला त्यांचे घरा॥

भावार्थ : 'मेरे गुरु ही साक्षात् परब्रह्म परमात्मा हैं' - ऐसा जिनका दृढ़ विश्वास होता है, भगवान स्वयं उनके वश में हो जाते हैं और उनके घर रहकर उनकी सेवा-चाकरी करते हैं।

भ्रामक प्रचार का भंडाफोड़

आज भारत में ही भारत के संतों पर झूठे आरोप व दोषारोपण का दौर चल पड़ा है । कुछ-के-कुछ न जाने कितने-कितने आरोप ! कभी किसी इमाम पर या पोप-पादरियों पर क्यों नहीं दिखाते या लिखते ? यह हिन्दू धर्म की सहिष्णुता का दुरुपयोग है।

सूरत आश्रम की जमीन के बारे में भ्रामक प्रचार किया जा रहा है जिसकी वास्तविकता निम्नानुसार है । सन् १९९७ में प्रचलित बाजार कीमत पर सूरत की विवादित जमीन आश्रम को दी गयी थी। जिसकी कीमत का भुगतान १९९७ में दायर की गयी एक जनहित याचिका के कारण रुका था। वह भी १२ प्रतिशत ब्याज के साथ सन् २००५ में सरकार को चुका दिया था। प्रशासन ने रेवेन्यु रिकार्ड में आश्रम के नाम भूमि दर्ज कर आश्रम को कब्जा भी सौंप दिया। भूमि समतल एवं विकास खर्च तथा सारे पक्के निर्माण कार्य - १६२५ फुट लम्बी रिटेनिंग दीवाल, शिव मंदिर, हनुमान मंदिर, बाल संस्कार केन्द्र आदि के निर्माण के पश्चात् हुई इस जमीन की बाजार कीमत हाईकोर्ट के निर्णय के पृष्ठ क्र. ४७ पर ३ से ४ करोड़ बतायी है, जबकि कुप्रचार करनेवाले इसके ८० करोड़ होने का कुप्रचार कर रहे हैं। इससे उनके कुप्रचार का भंडाफोड़ हो जाता है।

श्री बी.जे. दीवान
सेवा-निवृत्त मुख्य न्यायाधीश

विवादित भूमि आश्रम की कुल जमीन का एक छोटा-सा हिस्सामात्र है, जबकि कुछ टीवी. चैनलें पूरे आश्रम को अवैध बताकर आश्रम सील करने के आदेश जारी होने का भ्रामक प्रचार कर रहे हैं।

इस विवाद के तथ्यों की समीक्षा करने के बाद उस पर टिप्पणी करते हुए गुजरात उच्च न्यायालय के सेवा-निवृत्त मुख्य न्यायाधीश (Ex Chief Justice of Gujarat High Court) श्री बी.जे. दीवान ने कहा : ''एक बार जमीन सरकार द्वारा अभिग्रहित कर लिये जाने के बाद वह सरकार की मालिकी की जमीन हो गयी। अब सरकार वह जमीन किसको दे यह निर्णय सरकार को लेना है। सरकार को यह जमीन या तो आश्रम को देनी थी या फिर नगरपालिका को। सरकार ने नगरपालिका को इसी स्थल पर तथा नदी के दूसरे किनारे पर ज्यादा बड़ी जमीन आवंटित कर दी है, जो कि नगरपालिका को और भी ज्यादा अनुकूल है, शेष जमीन आश्रम को दी । अतः उससे जमीन वापस लेने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता । मूल उद्देश्य तो जनहित ही था। इस मूल सिद्धांत को याद रखिये कि सारी जमीन सरकार की है, सरकार जमीन की मालिक है और सरकार ने इस पर अस्थायी तौर पर एक-एक साल के लिए किसानों को खेती करने की अनुमति दी थी। उन कृषकों को उस जमीन पर कोई स्थायी अधिकार प्राप्त नहीं था क्योंकि जो जमीन पट्टे पर दी गयी थी उसका हर साल नवीनीकरण कराना होता है। मेरा विश्वास कीजिये, आश्रम ने जमीन पचा ली है यह बिल्कुल झूठ है।''

कुछ स्वार्थी तत्त्व छिन्दवाड़ा (म.प्र.) स्थित शक्ति ट्रस्ट के साथ संत श्री आसारामजी आश्रम को जोड़कर कुछ असत्य बातें व भ्रम फैलाने का प्रयास कर रहे हैं । इस संबंध में वास्तविकता निम्नानुसार है।

शक्ति स्टेट, जिला जांजगीर चांपा (छ.ग.) के स्व. राजा बहादुर लीलाधर सिंह की रानी इन्दुमति एवं राजकुमारी कु. ज्ञानदा देवी ने अपनी हयाती में ही शक्ति ट्रस्ट, छिन्दवाड़ा का पंजीयन दिनांक २२/०५/१९८७ को स्वयं करवाया था। स्व. राजा बहादुर लीलाधर सिंह की मृत्यु के बाद कु. ज्ञानदा देवी के भतीजे पुष्पेन्द्र बहादुर सिंह और सुरेन्द्र बहादुर सिंह ने रानी इन्दुमति एवं कु. ज्ञानदा देवी को हर तरह से सताना एवं परेशान करना शुरू कर दिया तथा उनकी शक्ति, जि. जांजगीर चांपा (छ.ग.) स्थित सम्पत्ति हड़प कर उन्हें शक्ति छोड़ने पर मजबूर किया, जिसकी रिपोर्ट उन्होंने एस.पी., कमिश्नर तथा राष्ट्रपति, भारत सरकार से भी की थी । इसलिए कु. ज्ञानदा देवी अपनी समस्त सम्पत्ति किसी भी परिस्थिति में पुष्पेन्द्र सिंह और सुरेन्द्र सिंह को नहीं देना चाहती थीं। कु. ज्ञानदा देवी ने दिनांक १/०६/१९९३ को नरसिंहपुर (म.प्र.) में पंजीकृत वसीयत, दो गवाहों के समक्ष निष्पादित की। जिसमें उन्होंने अपनी समस्त चल-अचल

सम्पत्ति शक्ति ट्रस्ट को दे दी। पुष्पेन्द्र सिंह एवं सुरेन्द्र सिंह के द्वारा तंग किये जाने का उल्लेख कु. ज्ञानदा देवी द्वारा दिनांक १८/१/९३ को म.प्र. के महामहिम राज्यपाल को लिखे पत्र से भी विदित होता है।

सन् १९९७ में छिंदवाड़ा में कु. ज्ञानदा देवी ने परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू के समक्ष सार्वजनिक रूप से शक्ति ट्रस्ट हेतु आशीर्वाद माँगा था और ट्रस्ट का आधिपत्य छिन्दवाड़ा स्थित बापूजी के शिष्यों को सौंप दिया। तत्पश्चात् उस पर कार्यवाही करते हुए ट्रस्ट की ट्रस्टी श्रीमती लक्ष्मीबाई चितले एवं श्रीमती रेणु वर्मा ने पंजीयक लोकन्यास, छिन्दवाड़ा को नये न्यासी जोड़ने हेतु ३/४/१९९८ को आवेदन दिया। **श्री सुरेन्द्र बहादुर सिंह जो कि कांग्रेस की सरकार में मंत्री भी रह चुके थे और तब श्री दिग्विजय सिंह की सरकार में विधायक थे, उनके दबाव के बावजूद पंजीयक लोकन्यास ने सच्चाई को देखते हुए परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू एवं श्री कौशिक पटेल को शक्ति ट्रस्ट में ३/१२/१९९८ को ट्रस्टी नियुक्त किया।**

शक्ति ट्रस्ट की सम्पत्ति हड़प करने के बदइरादे से पुष्पेन्द्र सिंह एवं सुरेन्द्र सिंह ने अपनी पुरजोर कोशिश से शक्ति ट्रस्ट को विवाद में घसीटा लेकिन समस्त न्यायालयों में उनके वाद निरस्त कर दिये गये। समस्त न्यायालयों से पराजित होने के पश्चात् ऐसा लगता है कि पुष्पेन्द्र सिंह का मानसिक संतुलन बिगड़ गया है जिससे उन्होंने छिन्दवाड़ा स्थित शक्ति ट्रस्ट के पदाधिकारी से फोन द्वारा पाँच लाख रुपये की माँग की एवं धमकाया कि उक्त माँग पूरी न होने पर मैं समस्त टीवी. चैनलों पर आपको बदनाम करूँगा।

म.प्र. विधानसभा में भी प्रश्न क्रमांक ९०४ के द्वारा शक्ति ट्रस्ट के संदर्भ में आश्रम द्वारा जबरन कब्जा किये जाने के बारे में प्रश्न किया गया। जिसमें पुलिस अधीक्षक, छिन्दवाड़ा ने स्पष्ट रूप से उल्लेखित किया हैं कि कु. ज्ञानदा देवी द्वारा कोई भी शिकायत आश्रम के बारे में नहीं की गयी है।

माननीय न्यायालयों में पुष्पेन्द्र बहादुर द्वारा आदिवासियों की भूमि के बारे में मुद्दा उठाया गया। लेकिन समस्त न्यायालयों ने उसे इस आधार पर निरस्त किया कि शहरी (अर्बन) नजूल भूमि पर आदिवासियों के द्वारा भूमि हस्तांतरण पर कोई वैधानिक रोक नहीं है। उच्च न्यायालय, म.प्र. द्वारा पूर्व में भी इस प्रकार का निर्णय (१९७३ JLJ ११७) दिया गया था।

जिला अधिकारी, छिन्दवाड़ा द्वारा पुष्पेन्द्र सिंह एवं सुरेन्द्र सिंह द्वारा लगायी समस्त आपत्तियों को विचारोपरांत निरस्त कर दिया गया तथा १०/११/२००३ को शक्ति ट्रस्ट की सम्पत्ति की लीज का नवीनीकरण भी कर दिया गया है।

स्व. रानी इन्दुमति एवं कु. ज्ञानदा देवी ने आदिवासियों की सेवा करने की अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए शक्ति ट्रस्ट बनवाया था, वह अब परम पूज्य बापूजी की सत्प्रेरणा से साकार हो गयी है तथा यह सत्कार्य आज भी अविराम चल रहा है। आज शक्ति ट्रस्ट द्वारा आदिवासियों एवं महिलाओं के लिए अनेक सेवा-प्रवृत्तियाँ चल रही हैं। ६० लाख रु. खर्च करके विद्यालय बनाया गया है, जिसमें गरीब व आदिवासी बच्चों को निःशुल्क शिक्षण दिया जाता है। समय-समय पर आदिवासियों में कम्बल, बर्तन, कपड़े तथा अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओं का वितरण किया जाता है तथा भंडारे (भोजन-प्रसाद वितरण) किये जाते हैं। प्रतिमाह अन्न-वितरण किया जाता है। निःसहाय महिलाओं को आर्थिक सहायता दी जाती है।

दिल्ली के करोलबाग के पास रिज में जो आश्रम है, वहाँ देश के विभाजन के पूर्व से ही प्राचीन हनुमान मंदिर था और आज भी वही मंदिर चला आ रहा है। स्वर्गीय महंत बालकदासजी ने अपनी बढ़ती उम्र के कारण आश्रम सँभालने के लिए समिति को समर्पित कर दिया था। उसी जगह का माननीय सुप्रीम कोर्ट ने समिति को कब्जा दिया है और भूमि आवंटन की प्रक्रिया चल रही है जो कि कानूनी सच्चाई है।

आश्रम को बदनाम करने की इतनी साजिशें क्यों ? भाई ! हम आपके हैं, पराये नहीं हैं और आप हमारे हैं। गाँधीजी के लिए अंग्रेज पिट्ठुओं ने कितना कुप्रचार किया था, फिर क्या हुआ ? भारतवासी कुप्रचार के शिकार जल्दी नहीं बनते।

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

इस रंग-बिरंगी दुनिया में हैं, जीवों के विविध प्रकार।
कुछ एक-दूजे से भिड़ते हैं, कुछ करते प्राणिमात्र से प्यार॥

प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्य बापूजी ने अपने आत्मिक प्यार का दरिया २२-२३ नवंबर की शाम रायता, जि. थाने (मुंबई) के नवनिर्मित आश्रम में बहाया तो २४ से २६ नवम्बर तक अंबरनाथ, मुंबई (महा.) में बहाया। लोकनगरी मैदान प्रथम दिन ही श्रद्धालुओं की विशाल संख्या से नन्हा साबित हुआ। यहाँ सत्संग का शुभारंभ विद्यार्थी सत्र से हुआ। बच्चों को पढ़ा-लिखाकर पेटपालू जीव बनाने की परिपाटी चल पड़ी है। यह समाज और राष्ट्र के लिए अच्छा नहीं है। किताबी ज्ञान के साथ-साथ आध्यात्मिक व यौगिक शिक्षा बच्चों की बहुमुखी प्रतिभा को विकसित करने के साथ ही आत्मिक विकास के लिए भी एक आवश्यक पहलू है। पूज्यश्री ने छात्र-छात्राओं को किताबी ज्ञान के क्षेत्र में सफलता पाने के लिए अपने कई अनुभूत यौगिक प्रयोग बताये और आत्मिक विकास के लिए आह्वान करते हुए कहा :

''मनुष्य अपनी योग्यता का लाखवाँ हिस्सा भी विकसित नहीं कर पाया है। अभी विकास की अनंत संभावनाएँ छुपी हुई हैं।''

अंबरनाथ में अपनी हृदयस्पर्शी अमृतवाणी की वर्षा करते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''कर्म के प्रेरक, कर्म के निर्वाहक और कर्म के फलदाता परमात्मा का आश्रय लेकर कर्म करें और शास्त्रदृष्टि से परिणाम का विचार करके, अपनी योग्यता का विचार करके **'बहुजनहिताय-बहुजनसुखाय'** कर्म करें। कर्म के बाद अपने हृदय में आत्मसंतोष फलित हुआ कि अंतरात्मा की लानत फलित हुई, यह जरा देखते रहें।''

यहाँ सत्संग की पूर्णाहुति कर बदलापुर (महा.) एवं लोनावला (महा.) में दर्शन-सत्संग देते हुए पूज्य बापूजी आलंदी आश्रम (महा.) पहुँचे। एकान्त और मनोरम स्थान पर निर्मित इस आश्रम-प्रांगण में २८ व २९ नवम्बर को पूज्यश्री ने अपने आत्मिक प्रेम की सरिता से भर-भर के प्यालियाँ उँडेलीं। प्रेमी भक्तों के हृदयकमलरूपी पात्र इस प्रेम-सरिता के प्रवाह में बह चले।

शक्तिपात वर्षा के आचार्य, ब्रह्मनिष्ठ पूज्य बापूजी ने ऐसा जाम पिलाया कि

अजब सरूर मीठा, दिलोजान पे है छाया।
भीतर ही मय को पी के, सुख दो जहाँ का पाया॥

१ से ३ दिसम्बर तक नोयडा (उ.प्र.) में पूज्यश्री ने अपने आध्यात्मिक ज्ञान की सरिता बहायी। जीवन में भौतिक उन्नति के साथ ही शाश्वत सुख व शांति के लिए अध्यात्म के सम्पुट की आवश्यकता पर जोर देते हुए पूज्य बापूजी ने बताया कि ''दो प्रकार की उन्नति होती है - भौतिक और आध्यात्मिक। भौतिक उन्नति है शरीर के लिए और आध्यात्मिक उन्नति है स्व के लिए। आध्यात्मिक उन्नति के सम्पुट से रहित भौतिक उन्नति में काम, क्रोध, भय, शोक, अभिमान, राग, द्वेष - ये सब झंझट बढ़ते हैं। आध्यात्मिक उन्नति में निरभिमानिता, सत्यसंकल्प सामर्थ्य, परदुःखकातरता, सरलता, सहजता - ये सब सद्गुण रहते हैं। आध्यात्मिक उन्नतिवाला आप भी तृप्त रहता है और दूसरों को भी तृप्ति देता है। आध्यात्मिकता से विमुख व्यक्ति केवल

भौतिक वासनाओं से, अहंता, विकारों से दूसरों पर दोषारोपण, फरियादों से भरा रहता है। विश्व के विकसित देशों की केवल भौतिक उन्नति के तरफ भागनेवालों की दुर्दशा प्रत्यक्ष है।''

३ दिसम्बर को पूज्य बापूजी ने बताया : ''आज मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी है जो ज्योतिषशास्त्र के अनुसार 'पिशाचमोचनी तिथि' कहलाती है। जो अपघात अथवा किसी नीच कर्म के कारण भूत-प्रेत बन गये हैं, वे भी हैं तो भगवान के ही अंश, भगवान की ही संतानें। उनका भी मंगल हो ऐसा हम चाहते हैं, करते भी हैं। इस इलाके में जो भी प्रेतात्माएँ हैं उनका आज खुशहाली का दिन है।''

नोयडा क्षेत्र के भूत-प्रेतात्माओं की सद्गति के लिए पूज्य बापूजी की प्रेरणा से इस उत्तम अवसर पर यज्ञ-हवन का आयोजन किया गया, मंत्रजप व शांतिपाठ किया गया। पूज्यश्री ने नोयडा में पाँच हवन कुंड बनवाये व ब्राह्मणों को 'पिशाच विमोचन मंत्र' देकर उसकी आहुतियाँ देने के लिए कहा। साथ ही तर्पण भी करवाया ताकि प्रेतात्माओं को तृप्ति मिले।

४ दिसम्बर की सुबह में नोयडा में पूर्णिमा व्रतधारियों को दर्शन-सत्संग प्रदान कर पूज्यश्री मध्य, पश्चिम एवं दक्षिण भारतवासी भक्तों को पूर्णिमा दर्शन देने ४ दिसम्बर को ही अमदावाद आश्रम पहुँच गये।

जहाँ जन्म-मरण के फेरे से छूटने के लिए साधक-भक्त वर्षों तक पूज्यश्री के सान्निध्य से सुस्पंदित स्थल 'मोक्ष कुटीर' के फेरे लगाते हैं, कुछ समय यहाँ शांत चित्त होकर बैठते हैं व जप-ध्यान का लाभ लेकर ही घर लौटते हैं। फिर इसी आश्रम में पूर्णिमा दर्शन मिले तो सोने पे सुहागा ! पूर्णिमा दर्शन के बाद भी कई भक्तों ने कुछ दिन यहीं रुककर पूज्यश्री के एकांतवास के सूक्ष्म, तात्त्विक सत्संग का लाभ लिया।

२३ से २५ दिसम्बर तक सूरत आश्रम (गुज.) में ध्यान योग साधना शिविर संपन्न हुआ। जिसमें साधकों के साथ गुजरात व देश के विभिन्न भागों से आये हजारों-हजारों विद्यार्थियों ने भाग लिया। पूज्य बापूजी ने अनेक यौगिक प्रयोग कराये तथा स्मरणशक्ति बढ़ाने व बहुमुखी प्रतिभा के विकास की कुंजी भी बतायी।

भौतिक उन्नति के साथ आध्यात्मिक उन्नति की आवश्यकता पर जोर देते हुए पूज्यश्री ने बताया : ''यदि भौतिक उन्नति के साथ आध्यात्मिक उन्नति नहीं हुई तो हिटलर, सिकंदर, नेपोलियन, रावण, कंस जैसी दुर्गति हो जाती है और आध्यात्मिक उन्नति को दृष्टि में रखकर यदि ऐहिक उन्नति होती है तो राजा जनक, राजा भोज, राजा अश्वपति, महाराज विक्रमादित्य की तरह महान जीवन हो जाता है।''

'बाल संस्कार एवं विद्यार्थी उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविर' प्रशिक्षण

- उत्तरायण ध्यान योग शिविर में (दिनांक १२ से १४ जनवरी) 'बाल संस्कार' एवं 'विद्यार्थी उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविर' का प्रशिक्षण दिया जायेगा।
- शिविर शिक्षकों के लिए १५ जनवरी की सुबह पूज्यश्री के सान्निध्य में प्रश्नोत्तरी का विशेष सत्र होगा।
- स्वर्ण कार्ड/रजत कार्ड धारकों को भी पूज्यश्री के समक्ष प्रश्नोत्तरी का लाभ मिलेगा। स्वर्ण कार्ड धारकों को आगे विशेष खंड में बैठने का लाभ मिलेगा।

पूज्य बापूजी के आगामी सत्संग-कार्यक्रम

(1) बान्द्रा (पूर्व) में 30 दिसम्बर से 2 जनवरी (दोपहर तक), बान्द्रा-कुर्ला कॉम्प्लेक्स, G-Block, बान्द्रा (पूर्व), मुंबई (महा.)। संपर्क : (022) 26864142, 9322519312, 9324623742.

(2) अमदावाद आश्रम में सत्संग : 2 (दोपहर से) व 3 जनवरी (सुबह तक)। संपर्क : (079) 27505010-11.

(3) जयपुर (राज.) में पूर्णिमा दर्शन : 3 जनवरी, संत श्री आसारामजी आश्रम, गोनेर रोड, गोविन्दपुरा, जयपुर। संपर्क : (0141) 2274604, 3271911.

घर-घर साहित्य पहुँचायें योजना

परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू के ओजपूर्ण पावन अमृतवचनों के संकलन से बनी पुस्तकें, जो समाज के हर वर्ग के लोगों के सर्वांगीण विकास की कुंजियाँ सँजोये हुए हैं, अब तक असंख्य लोगों के जीवन की दिशा को बदल चुकी हैं।

मानव-समाज का कायापलट कर देनेवाली इन पुस्तकों को आप त्यौहार, जन्मोत्सव, शादी-विवाह आदि के शुभ प्रसंगों पर अपने सगे-संबंधियों, मित्रों को भेंट कर सकें अथवा जो पश्चिमी सभ्यता के अंधानुकरण में अपना अहित कर रहे हैं, ऐसे लोगों में वितरित कर सकें इसलिए **'घर-घर साहित्य पहुँचायें योजना'** शुरू की जा रही है।

इस योजना के अन्तर्गत विभिन्न भाषाओं की पुस्तकों के सेट तैयार किये गये हैं तथा विशेष छूट दी गयी है ।

* कम-से-कम तीन सेट लेने पर डाकखर्च माफ।
* कम-से-कम पाँच सेट लेने पर १०% की छूट।
* दस या अधिक सेट लेने पर १५% की छूट।

नोट : पाँच या अधिक सेट लेने पर पार्सल ट्रांसपोर्ट द्वारा भेजा जायेगा।

भाषा	मूल्य	डाकखर्च (एक सेट का)
१. हिन्दी	५००/-	१००/-
२. गुजराती	५००/-	१००/-
३. मराठी	४७०/-	१००/-
४. उड़िया	२५०/-	६०/-
५. तेलगू	२१०/-	६०/-
६. कन्नड़	१८०/-	५०/-
७. पंजाबी	७०/-	३५/-
८. सिंधी	५०/-	३५/-
९. बंगाली	२५/-	२०/-
१०. अंग्रेजी	६०/-	२५/-
११. मलयालम	२०/-	२५/-
१२. तमिल	३५/-	२५/-
१३. नेपाली	२५/-	२०/-
१४. उर्दू	५/-	२०/-

* एक या दो सेट लेने हों तो डाकखर्च अवश्य भेजें। * नजदीकी आश्रम या समिति के सेवाकेन्द्र से सत्साहित्य लें तो डाकखर्च बच जायेगा।

* डी.डी./मनीआर्डर भेजने का पता- साहित्य विभाग, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-५

विशेष : डी.डी./मनीआर्डर के साथ अपनी माँग स्पष्ट रूप से लिखें। * वी.पी.पी. सेवा उपलब्ध नहीं है।

४२६ बच्चों को एच.आई.वी. इंजेक्शन लगाने पर छह को मौत की सजा

ट्रिपोली (एजेंसियाँ) १९ दिस. ०६ : आज लीबिया की एक अदालत में न्यायाधीश महमूद होइसा ने बुल्गारिया की पाँच नर्सों और फिलीस्तीन के एक डॉक्टर को घातक बीमारी एड्स फैलानेवाले एच.आई.वी. विषाणु का इंजेक्शन लीबिया के ४२६ बच्चों को जानबूझकर लगाने का दोषी ठहराते हुए अभियोजन पक्ष की माँग के अनुरूप मौत की सजा सुनायी।

अभियोजन पक्ष के अनुसार इन अभियुक्तों ने १९९० के दशक के अन्तिम वर्षों में बेंगाजी के एक अस्पताल में इन बच्चों को एच.आई.वी. विषाणु के इंजेक्शन लगाये थे।

संकीर्तन व मंगल कलश यात्राएँ व अन्य सेवाकार्य

लंडन (यु.के.)

रुड़की जि. हरिद्वार (उत्तरांचल)
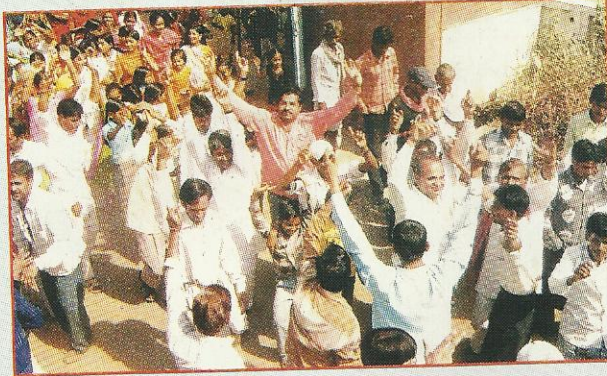
आफवा जि. दाहोद (गुज.)

गोधरा जि. पंचमहल (गुज.)

देगलूर जि. नांदेड़ (महा.)
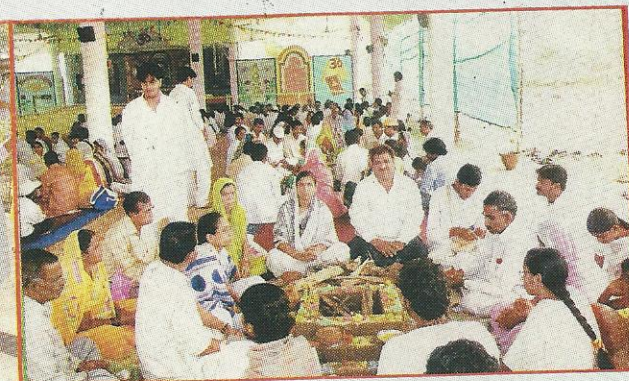
रायपुर (छ.ग.) में सामूहिक हवन।

नयागढ़ जि. पुरी (उड़ीसा) में निःशुल्क नेत्र चिकित्सा शिविर।
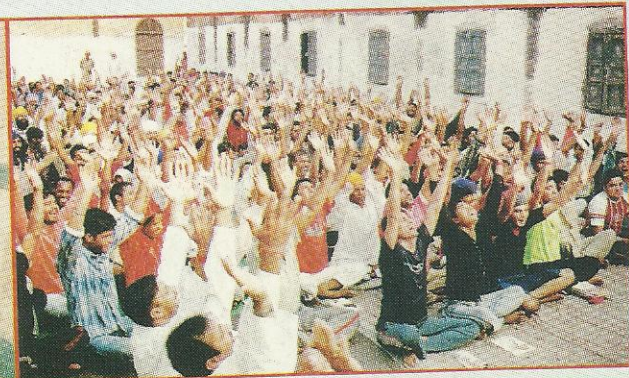
कपूरथला (पंजाब) के जेल में कैदी उत्थान कार्यक्रम।

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा समाज उत्थान के विभिन्न कार्यक्रम

1 January 2007
RNP.NO. GAMC 1132/2006-08
Licenced to Post without Pre-Payment
LIC NO. GUJ-207/2006-08
RNI NO.48873/91.
DL (C)-01/1130/2006-08.
WPP LIC NO. U (C)-232/2006-08.
G2/MH/MR-NW-57/2006-08
WPP LIC NO. NW-9/2007

छिन्दवाड़ा (म.प्र.) व नागपुर (महा.) में अनाज व जीवनोपयोगी सामग्री का वितरण ।

पधरा जि. महबूबनगर (आ.प्र.) व पीपरा, मिर्जापुर (उ.प्र) में भोजन-प्रसाद, कम्बल, साड़ियाँ, कापियाँ, साबुन आदि का वितरण ।

सुल्याचा पाडा, जि. थाने (महा.) व लासलगाँव जि. नासिक (महा.) में भंडारा व प्रसाद वितरण ।

बाँदा (उ.प्र.) व पटना (बिहार) में व्यसनमुक्ति अभियान के अंतर्गत जन-जागृति यात्रा तथा व्यसनमुक्ति पोस्टर व सत्साहित्य का वितरण ।

Posting at Rishi Prasad PSO between 1st to 14th of E.M. Back issue at PSO-AHD * Posting at ND.PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.